ओ३म्

अमीं भजन सुधा

भक्तराज अमींचन्दजी

सम्पादक
प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु

प्रकाशक
मुनिवर गुरुदत्त संस्थान
हिण्डौन सिटी (राज०)

ओ३म्

अमीं भजन-सुधा

भक्तराज अमींचन्द

सप्रेम भेंट
जितेन्द्र कुमार गुप्ता
वकील और कर सलाहकार
बठिंडा - 151005

सम्पादक

प्राध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

मुनिवर गुरुदत्त संस्थान

हिण्डौन सिटी (राजस्थान)

सम्मर्पण

मैं महर्षि दयानन्द सरस्वती के निष्ठावान् शिष्य तथा आर्यसमाज के आदिकवि भक्तराज श्री अमींचन्दजी के भजनों का यह अनुपम संग्रह, महर्षि दयानन्दजी महाराज के पूजनीय गुरुदेव प्रज्ञाचक्षु ब्रह्मर्षि दण्डी विरजानन्दजी महाराज तथा उनके जन्मस्थान करतारपुर (पञ्जाब) में गुरुकुल चलाने-वाले सब आर्य भाइयों को सादर समर्पित करता हूँ।

राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

क्रम

नींव का एक पत्थर

महाशय गेंदारामजी

महाशय श्री गेंदारामजी का जन्म विक्रम संवत् १९४० में सिखों के प्रसिद्ध तीर्थ स्थान तलवंडी साबो (गुरु की काशी) में हुआ। यह कस्बा पटियाला राज्य में था। आपके पिताजी का नाम लाला विसनाराम था। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में महाशयजी लाहौर, अमृतसर आदि नगरों में व्यापार के लिए आते जाते थे। उधर आर्यसमाज का प्रचार सुना तो बहुत प्रभावित हुए।

आपने तलवंडी साबो में आर्य-समाज स्थापित कर दिया। कुछ समय के पश्चात् रामां मण्डी चले गये। रामां में भी कुछ युवकों को साथ लेकर आर्यसमाज स्थापित कर दिया। उन्हीं दिनों इस क्षेत्र में प्लेग की महामारी फैल गई। सगे-सम्बन्धी भी अपने परिवार के रोगियों से कतराते थे। किसी के शव के पास कोई नहीं फटकता था।

महाशय गेंदाराम, महाशय रौनकसिंह, महाशय निगाहीराम व वीर आत्मा-सिंह बिना किसी भेदभाव के मृतकों को श्मशान भूमि में ले-जाकर दाहकर्म करते थे। स्मरण रहे कि महाशय रौनकसिंह वानप्रस्थी ओम्प्रकाशजी के पूज्य पिताजी थे। इसी काल में तलवंडी साबो में एक साधु मण्डली आ गई। आर्यवीरों की यह टोली साधुओं में वैदिक धर्म का प्रचार करने निकल पड़ी। वहाँ इन्होंने एक भीमकाय तेजस्वी, प्रतापी संन्यासी को वैदिक धर्मी विचारों का पाया। वे साधुओं में रहकर अपने निराले ढंग से आर्यधर्म का प्रचार करते थे। सूझबूझवाले ये युवक

उस महात्मा को आग्रह करके रामां ले-आये। ये संन्यासी थे राजर्षि स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज।

अब स्वामीजी का मार्गदर्शन पाकर महाशय गेंदाराम व इनके मित्रों ने इस क्षेत्र के गाँव-गाँव में वैदिक धर्म-प्रचार की धूम मचा दी। रामां में विशाल आर्य मन्दिर बनाया गया। स्वामी श्रद्धानन्दजी, महाशय राजपालजी व वीर रामचन्द्रजी के बलिदान के समय आप रामां समाज के प्रधान व मन्त्री आदि पदों पर रहे। आपने रामां में स्कूल खुलवाया तो पटियाला राज्य के एक अधिकारी सरदार सुखदेवसिंह ने आपको जेल में बन्द कर दिया। अगले दिन ही महाशय निहालचन्द लाहौर गये और महाशय कृष्णजी आदि नेताओं को सारी घटना सुनाई। महाशयजी ने प्रताप में एक सम्पादकीय दिया और लाला अर्जुनदेवजी वकील को तुरन्त बरनाला भेजा ताकि महाशय गेंदाराम का अभियोग लड़ा जावे। नाज़िम ने कहा सब लोग मुझसे डरते हैं, परन्तु मैं महाशय गेंदारामजी से डरता हूँ। बाबा आप लोग अपने महाशय को जेल से ले-जाओ और मेरी जान छोड़ो। भटिण्डा का महात्मा हंसराज स्कूल भी इन्हीं वीरों के साहस का फल था। रियासतों में तव शासन का बड़ा भय होता था और बनिये तो वैसे ही वहुत डरते थे, परन्तु रामां, बरनाला, भदौड़ के बनिये जब आर्यसमाजी वन गये तो इनके साहस को देखकर सब चकित रह जाते थे।

एक बार महाशयजी की अनुपस्थिति में एक तहसीलदार ने चपड़ासी भेजकर इनकी दुकान से कुछ सामान मँगवाया और पैसे देने से इनकार कर दिया। इतने में महाशयजी भी आ गये। उन्होंने सारा सामान वहीं धरा लिया। तहसीलदार ने महाशयजी से टक्कर ले-ली। महाशय निहालचन्द, महाशय निगाहीराम, महाशय रौनकसिंह आदि सब आर्य तहसीलदार के पास पहुँच गये। वह इन सबको देखकर डर गया और उसे महाशय गेंदाराम से क्षमा माँगनी पड़ी।

सन् १९३८ में आप व्यापार के लिए भटिण्डा आ गये। यहाँ भी आर्यसमाज का बड़ा काम किया। भटिण्डा में स्कूल खोलने की स्वीकृति पटियाला रियासत के शिक्षामन्त्री सरदार क० म० पाणिकर से शिमला जाकर प्राप्त की। इस स्कूल को राज्य-अधिकारी खुलने नहीं देते थे। रामांवालों ने इसके लिए सिर-धड़ की बाजी लगा दी। आपने अग्रवालों में व्याप्त सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए बड़ा संघर्ष किया। कई सम्मेलन करवाये। कई विधवा विवाह करवाये जिस कारण बड़े कष्ट झेले। विधर्मियों की शुद्धियाँ कीं। दलितोद्धार के लिए कड़े विरोध व बहिष्कार का सामना बड़ी वीरता से किया।

गुरुकुल भटिण्डा के खुलवाने में भी आपने पूरा सहयोग किया। इस

गुरुकुल की आधारशिला हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्दजी ने रक्खी थी। आप गुरुकुल कांगड़ी में भी एक ब्रह्मचारी की पढ़ाई का पूरा खर्च देते रहे। महर्षि की बलिदान अर्धशताब्दी पर आप सपरिवार अजमेर गये थे। धूरी में आर्यस्कूल खोलने में महाशय कुन्दनलालजी के सहायक रहे।

महाशय गेंदारामजी की एक पुत्री और एक पुत्र थे। पुत्री को कन्या गुरुकुल देहरादून में पढाया। इसका विवाह प्रसिद्ध विद्वान् श्री विद्याभास्करजी से किया। आपकी पुत्री प्रिंसिपल रहीं। दोहता नासा में अभियन्ता है; आपके इकलौते पुत्र की मृत्यु सन् १९७४ में हुई। यह बहुत बड़ा धक्का था। थोड़े समय पश्चात् आपकी भी मृत्यु हो गई।

महाशय गेंदाराम पुरुषार्थ व परमार्थ के पुतले थे। स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज, स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी महाराज व महाशय कृष्ण सरीखे नेता आपकी लगन, उत्साह व निःस्वार्थ सेवा पर बड़ा गर्व करते थे। आपने अपने क्षेत्र में कई शास्त्रार्थ भी करवाये। आपने लगभग सत्तर वर्ष आर्यसमाज की सक्रिय सेवा की। आप सच्चे अर्थों में आर्यसमाज की नींव का एक पत्थर थे।

卐

महाशय किशोरचन्दजी

आप तलवण्डी सावो के प्रसिद्ध आर्यसमाजी महाशय गेंदारामजी के सगे भतीजे थे। आपका जन्म सन् १६०४ में हुआ और निधन दिसम्वर सन् १६७६ में हुआ। आपके पिता का नाम महाशय तिलकरामजी व माता का नाम श्रीमती अस्सोदेवी था।

आपने तलवण्डी सावो के खालसा स्कूल में आठवीं तक शिक्षा प्राप्त की। आपका विवाह वहुत छोटी आयु में श्रीमती दुर्गादेवी, सुपुत्री लाला पत्तीराम, ग्राम फत्तामालों से हुआ था।

आपने खाँड का थोक व्यापार आरम्भ किया। विदेशों से खाँड मँगवाते थे। उन्हीं दिनों अपने चाचा महाशय गेंदाराम के प्रभाव से आर्यसमाजी बन गये। सन् १६२६ में रियासत वहावलपुर में व्यापार के लिए चले गये। वहाँ आर्यसमाज का बड़ा प्रचार किया। नवाब को आपकी योग्यता का पता चला तो आपको मण्डी का चौधरी वना दिया, फिर तलवण्डी सावो आकर पटवार की परीक्षा ४८३/५०० अंक प्राप्त करके पास की। प्रथम रहने पर भी आर्यसमाजी होने के कारण आपको नौकरी न मिली। सन् १६२६ में आपको वुलवाकर सर्विस दे दी गई।

आप भी अपने चाचा के साथ ऋषि की बलिदान अर्धशताब्दी पर अजमेर गये। आपको एक वार छल से राज्याधिकारियों ने सर्विस से हटा दिया। कुछ वर्ष पश्चात् महाराजा पटियाला ने पुनः सर्विस में ले-लिया।

आपने आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त करके रोगियों की सेवा आरम्भ कर दी। आपका बनाया हुआ एक सुर्मा वड़ा लोकप्रिय हो गया। उसे प्रायः निःशुल्क ही

बाँटते थे। मुझे भी एकवार सुर्मा भेंट किया था।

आपका स्वाध्याय वड़ा विस्तृत था। स्मृति असाधारण थी। गुरु ग्रन्थसाहिव व सिख इतिहास का अद्भुत अध्ययन था। गुरु ग्रन्थसाहिव के प्रमाण उनकी जिह्वा पर सदा उपस्थित रहते थे। हदीसों की वड़ी जानकारी थी। धर्मचर्चा में बड़ा रस लेते थे। किसी भी गूढ़-से-गूढ़ दार्शनिक विषय पर चर्चा छेड़ दो वस फिर तो महाशय किशोरचन्दजी अपनी सुधवुध खोकर उस चर्चा में ऐसे डूव जाते कि खाना-पीना भी भूल जाते। एकवार श्री तरसेमकुमारजी गोनियाना के घर पर रात भर रहे तो धर्मचर्चा करते हुए रात से प्रभात कर दी। न स्वयं सोये न दूसरों को सोने दिया।

उन्हें शास्त्रार्थ करने-कराने में वड़ा आनन्द आता था। पं० मनसारामजी के साथ कई शास्त्रार्थों में रहे थे। रामां मण्डी में आर्यसमाज के सव वड़े-वड़े विद्वान्, महात्मा व नेता आते रहे। महाशय किशोरचन्दजी ने अपने युग के सभी आर्य महापुरुषों के दर्शन किये थे। वह रामां की आर्यसंस्थाओं व समाज के विभिन्न पदों पर कई वार आसीन हुए। उनका अपना व रामां आर्यसमाज का वहुत वड़ा पुस्तकालय था, जिनमें वड़े दुर्लभ ग्रन्थ थे।

अव महाशय के पौत्र श्री जितेन्द्रकुमारजी एडवोकेट का भी अपना अच्छा पुस्तकालय है। श्री जितेन्द्रकुमारजी के पास वड़े-वड़े आर्य विद्वानों के सभी ग्रन्थ मिलेंगे। आप ऋषिकृत ग्रन्थों का स्वाध्याय करते ही रहते हैं।

महाशय किशोरचन्दजी चलता-फिरता आर्यसमाज थे। वहुत प्रत्युत्पन्नमति थे। उनकी विलक्षण सूझ को देखकर सव चकित रह जाते थे।

प्रकाशकीय

एक बार मेरे एक परिचित ने कहा कि आर्यसमाज का साहित्य निश्चितरूप से उच्चस्तरीय है, परन्तु मेरी समझ में यह नहीं आता कि अनुभव और स्वाध्याय के लिए विख्यात आर्यसमाजी पुराने से ही क्यों चिपके रहते हैं। नया नहीं लिखा जा रहा। इसका परिणाम यह होगा कि लकीर के फकीर एक दिन अस्तित्वविहीन हो जाएँगे।

उस समय मैंने जो कुछ उन्हें कहा, वह इस प्रकार था—सत्य एक ही है। यह शाश्वत है, किसी के कहने से यह बदलता नहीं। जैसे पृथिवी गोल थी और है तथा प्रलय तक रहेगी। यदि कुछ लोग इसे चपटी मानते रहे और अब गोल मानते हैं तो इससे पृथिवी पर क्या प्रभाव पड़ा? इसी प्रकार मानवजीवन हेतु उपयोगी वेद-ज्ञान प्रारम्भ से ही है और यह हर काल में रहेगा। अब यदि कोई प्रगतिशीलता के नाम पर इसे इतिहास की वस्तु मान पुस्तकालयों में वन्दकर नवीन स्थापना करना चाहे तो यह नवीन स्थापना ही अस्थाई है। मानव इतिहास इसका साक्षी है, न जाने कितनी मान्यताएँ प्रचलित हुईं, परन्तु आज उनकी क्या स्थिति है। इसके विपरीत वैदिक मान्यताएँ सुरक्षित हैं, क्योंकि वे शाश्वत हैं। आर्यसामाजिक लेखन-चिन्तन इसी के आधार पर है। हाँ! एक बात अवश्य स्वीकार्य होनी चाहिए कि सूक्ष्मरूप में विद्यमान इस ज्ञान को सरल बनाकर जनसामान्य तक पहुँचाने की दिशा में यत्न होते रहना चाहिए।

संस्थागत साहित्य के अन्तर्गत प्राचीन साहित्य प्रकाशन के सम्बन्ध में यह तथ्य अनदेखा नहीं किया जा सकता कि पुराने पर ही नवीन की आधारशिला होती है। पुराने से सीखने की दिशा में महत्त्वपूर्ण सहायता मिलती है और नई पीढ़ी को प्रेरित करने तथा गौरवयुक्त कर उत्साहित करने तथा जो कमियाँ रह गईं हैं उन्हें सुधारने की दिशा में संकेत प्राप्त होते हैं।

हमने आर्यसमाज के एक महान् मनीषी पण्डित गुरुदत्त विद्यार्थी के नाम से यह संस्थान प्रारम्भ कर जहाँ अन्यान्य क्षेत्रों में कार्य करने का संकल्प लिया है, वहीं प्रमुखतया साहित्य प्रकाशन द्वारा उच्च मानवीय भावनाओं के विकास का यत्न प्रारम्भ किया है। मुनिवर गुरुदत्त उस युग के एम० ए० थे, जिस युग में बी० ए० पास बड़ी-बड़ी सुविधापूर्ण नौकरियाँ आसानी से प्राप्त कर लेते थे परन्तु महर्षि दयानन्दजी महाराज द्वारा प्राप्त मानवकल्याण की लगन ने आपको फ़क़ीरी का जीवन अपनाने को प्रेरित किया। यह महामानव जिसका वैदिक

संज्ञाविज्ञान आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी के पाठ्यक्रम में रहा मात्र छब्बीस वर्ष की आयु में दिवंगत हो गया।

हमारे इस प्रकाशनयज्ञ में जो पहली आहुति पड़ी है वह भी ऐसे ही दीवाने परिवार—श्री जितेन्द्रकुमारजी गुप्त एडवोकेट की पड़ी है। आपके बाबा महाशय किशोरचन्दजी को इसलिए नौकरी नहीं मिली, क्योंकि आप मानवहितैषी संस्था आर्यसमाज के सदस्य थे। बाद में यह भूल सुधारी अवश्य गई, परन्तु प्रत्येक सिद्धान्त-निष्ठ आर्यसमाजी का जीवन मानवहितार्थ कष्ट-सहन का एक इतिहास रहा है। इसी परिवार के एक अग्रज महाशय गेंदारामजी का जीवन भी ऐसा ही प्रेरणादायी रहा।

भक्तराज अमींचन्दजी आर्यसमाज की पहली पीढ़ी के कवि थे। महर्षि दयानन्दजी की दिव्य दयादृष्टि जब पतितोन्मुख अमींचन्द पर पड़ी तो वह वास्तविक अमृत का झरना बन फूट पड़ा। वर्तमान में भी आपके अनेक भजन गाये जाते हैं। भक्तजी ने जीवन का उत्तरार्ध शानपूर्वक परोपकारार्थ जिया। लेखक का परिचय उसका लेखन होता है। आपका काव्य अन्तःप्रेरित था जो परिस्थितियों से स्वतः स्फूर्त हो उठता था। यह काव्य के नियमों की परिधि से हटकर उस युग का प्रतीक है जब धार्मिक, सामाजिक रुढ़ियों के मकड़जाल से निकलने का प्रयत्न हो रहा था। इस संकलन की रचनाएँ वर्तमान में अनुपयुक्त लग सकती है, परन्तु एक समय इन्होंने महत्त्वपूर्ण कार्य किया है और आज भी कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ इनकी उपयोगिता निर्विवाद है। इन रचनाओं से एक कालविशेष की ऐतिहासिकता तो सुरक्षित रहेगी ही।

सम्पादक श्री राजेन्द्र 'जिज्ञासु' तथा श्री शिवनाथरायजी ने अथक श्रम करके इस संकलन को उपयोगी बना दिया है। राग-रागिनी तथा ताल आदि के ज्ञान से इन भजनों का आनन्द सहज ही प्राप्त किया जा सकेगा। प्राध्यापक ' जिज्ञासु' जिस प्रकार का शोधपूर्ण लेखन कर रहे हैं उसके लिए वे साधुवाद के पात्र तो हैं ही साथ ही उनका साहित्य हमारे प्रामाणिक ज्ञान-विस्तार में सहायक भी है। यह बहुत बड़ी बात है कि हम पढें तो सही, परन्तु प्रामाणिक पढ़ें। लिखने के नाम पर बहुत कुछ असत्य लिखा जाता है जो लेखकीय धर्म तो नहीं।

हमें अपने सुधी पाठकों से सहृदय दिशा-निर्देश की अपेक्षा रहेगी ही। अन्त में एक निवेदन उन सभी पाठकों की सेवा में है जो वर्तमान में सत्यार्थप्रकाश जैसे आकारवाले ग्रन्थ की प्राप्ति एक रुपये में चाहते हैं। जिस समय एक रुपये में सत्यार्थप्रकाश उपलब्ध था उसके हिसाब से अब एक रुपये का क्या स्वरूप होगा। हम यदि अपने साहित्यानुराग को त्यागते चले तो भविष्य सुखद नहीं होगा। हाँ! साहित्य के नाम पर असत्य को स्वीकार नहीं किया जाना चाहिए। साहित्य क्रय करना विद्वत् सम्मान का ही रूप है।

—*प्रभाकरदेव आर्य*

भक्तराज अमींचन्दजी

जीवन झाँकी एवं प्रस्तावना

पश्चिमी पञ्जाब (अब पाकिस्तान में) के झेलम जनपद ने भारतभूमि व मानव-समाज को समय-समय पर कई महान् विभूतियाँ देकर इतिहास में नये-नये अध्याय जोड़े हैं। बहुत पुराने समय की बात यदि हम न भी करें तो भी इसी युग में इसी झेलम जनपद ने सत्यनिष्ठ, वेदप्रिय, वीर-विप्र, रक्तसाक्षी पं० लेखरामजी को जन्म दिया। इसी धरती ने भारतीय स्वाधीनता संग्राम के वीर योद्धा हुतात्मा खुशीराम को जन्म दिया। वीर खुशीराम ने अंग्रेज़ी साम्राज्य से जूझते हुए सीने पर सात गोलियाँ खाकर वीरगति पाई। इसी झेलम की धरती ने प्रखर क्रान्तिकारी भाई बालमुकन्द को जन्म दिया। सती माता रामरखी इसी धरती की देन थी। देवतास्वरूप भाई परमानन्द को जन्म देने का अभिमान भी इसी झेलम जनपद को है।

इन पुण्यात्माओं के अतिरिक्त इस क्षेत्र ने एक और नररत्न को जन्म दिया। वे थे श्री अमींचन्दजी। आपका जन्म झेलम ज़िले की पिण्डदादनखाँ तहसील के हिरणपुर ग्राम में हुआ। आप मोहियाल कुल में जन्मे। आपका गोत्र बाली था। मोहियाल ब्राह्मण बहुत वीर होते हैं। सैनिक स्वभाव के ये लोग सेना व पुलिस में ऊँचे-ऊँचे पदों को सुशोभित करते आये हैं। ये लोग सुशिक्षित व बुद्धिमान् भी बहुत होते हैं।

अमींचन्दजी को बाल्यकाल से ही संगीत में विशेष रुचि रही। इस कारण इनकी सङ्गत बिगड़ गई। मीरासियों व वेश्याओं की सङ्गत से इनमें वे सब दोष आ गये जो मनुष्य को पतनोन्मुख कर देते हैं। आचार्य चमूपतिजी ने भक्तजी की संक्षिप्त जीवनी में ठीक ही लिखा है—गानविद्या पर यह दैव का अत्याचार है कि यह विद्या दुराचारियों के हाथ जा पड़ी है। अमींचन्द गानरस का रसिया था। यही रस उसे दुराचारियों में ले-गया और उनमें ऐसा फँसाया कि वहीं तन्मय कर दिया। मांस खाता, मद्य पीता और दिन-रात दुर्व्यसनियों की कुसङ्गति में रहता।

उस युग में पञ्जाब में उर्दू का ही बोलबाला था। अमींचन्द भी उर्दू-फ़ारसी

के अच्छे ज्ञाता थे, परन्तु उनके भजनों से यह पता चलता है कि उन्हें हिन्दी का भी अच्छा ज्ञान था। संस्कृत का भी कुछ अध्ययन किया। यह कहना कठिन है कि संस्कृत, हिन्दी का अध्ययन वैदिक धर्मी बनने के पश्चात् ही किया अथवा पहले से ही इन भाषाओं का ज्ञान था।

वे चुंगी के दरोगा बने और फिर स्थानापन्न तहसीलदार की पदवी प्राप्त हुई। उस काल में भारतीयों के लिए इस पद पर पहुँच जाना बड़ा सम्मानास्पद था। एक सेठ के गुमाशते से मिलकर वस्तुओं का अनुचित भाव लिख दिया। इससे उस गुमाशते को बहुत अधिक राशि मिलने की सम्भावना थी। ये सब-कुछ हेरफेर ही तो थी। भेद खुल गया। श्री अर्मीचन्दजी व तहसीलदार दोनों लपेट में आ गये। आपको त्यागपत्र देना पड़ा। तहसीलदार को तो कारावास का दण्ड भोगना पड़ा। सेठजी ने अर्मीचन्दजी को चालीस रुपये की बजाए साठ रुपये मासिक की नौकरी दे दी। वे कलकत्ता आदि दूरस्थ नगरों में कार्यरत रहे। नये-नये अनुभव प्राप्त हुए। कहते हैं कि वे तीन वर्ष तक झेलम से बाहर रहे।

धर्मवीर पं० लेखरामजी ने लिखा है कि अर्मीचन्दजी ने झेलम में ऋषि दयानन्दजी के उपदेशामृत का पान किया, परन्तु आर्यसमाज के इतिहास के एक मर्मज्ञ विद्वान् पं० श्री विष्णुदत्तजी एडवोकेट तथा आचार्य चमूपतिजी ने लिखा है कि एक डाक्टर महाशय अर्मीचन्दजी को गुजरात ले-गये। वहीं आपने ऋषि के दर्शन किये और ऋषि दरबार में भजन गाये। वहाँ ऋषिजी ने कहा, **"है तो हीरा, परन्तु कीचड़ में पड़ा है।"** बस ऋषि के इस कृपाकटाक्ष से, इस एक वाक्य से अर्मीचन्द की काया ही पलट गई। वह आर्यसमाज का सभासद् बन गया। सब व्यसन छूट गये। बुराइयों की कीचड़ से निकल गया। आचार्य चमूपतिजी के शब्दों में—जो अनुराग उसे विषयभोग में था, वह अब ईश्वरभक्ति में हो गया।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि महर्षि दयानन्द गुजरात से पूर्व झेलम पधारे थे। वीरवर लेखरामजी को लाला गङ्गारामजी ने यह बताया था कि अर्मीचन्दजी ने झेलम में ऋषि की उपदेशमाला को सुना था। पं० लेखरामजी भी झेलम जिला के थे। भक्त अर्मीचन्दजी के साथ अमृतसर, लाहौर आदि समाजों के उत्सवों पर कई बार मिलकर प्रचार किया। ऐसा लगता है कि भक्तराज अर्मीचन्दजी ने ऋषिजी को पहले झेलम में सुना, पुनः गुजरात में सुना। जीवन परिवर्तन की घटना गुजरात की है।

झेलम में अर्मीचन्दजी की ससुराल थी। उन्होंने वहीं कुछ भूमि ले-ली।

वहीं रहने लगे। दस वर्ष तक वहाँ आर्यसमाज के विभिन्न पदों को सुशोभित किया। मृत्यु के समय वे आर्यसमाज के प्रधान थे।

पहले वे नवीन वेदान्ती थे। इसलिए उनके भजनों में कहीं-कहीं संसार की असारता पर अधिक बल दिया गया है। पहले वे ग़ज़लें लिखा करते थे, अब भजन लिखने लगे। उनके गले में विशेष रस था। श्रोता उनके सरस भजनों को उन्हीं के मुख से सुनकर भावविभोर होकर झूम उठते थे। आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सवों पर उनके भजनोपदेश की तत्कालीन पत्रों के सम्पादकों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

अमींचन्दजी ने संस्कृत, हिन्दी, उर्दू व पञ्जाबी में भजनों की रचना की है। डोगरी भाषा में भी कुछ भजन रचे हैं। भक्तिरस तो उनका प्रधान विषय था ही। अन्य सामाजिक, धार्मिक व राष्ट्रीय विषयों पर भी लिखा है। वे समय, स्थान व परिस्थिति के अनुसार गीत रच देते थे। एकबार कुछ मेहतर बन्धु उनसे मिलने आये। आपने तत्काल उन्हीं की स्थिति के अनुकूल प्रभुभक्ति का एक भजन रच दिया जिसका भाव यह था कि हम सूखी-बासी रोटी खाते हैं, हम छोटे जाने जाते हैं, परन्तु हम परमेश्वर के गीत गाते हैं। एकबार आपके पास कुछ नाविक आये। उन्हें ले-जाकर नौका में बिठाया। वहाँ उन्होंने नाविकों की स्थिति के अनुकूल एक मधुर भजन सुनाया।

भक्त अमींचन्द एकबार लुधियाना पधारे। उत्सव की कार्यवाही के पश्चात् भोजन करके आप लुधियाना की एक-एक दुकान पर जाने का यत्न करते थे। वे दुकानों पर माल खरीदने के लिए नहीं जाते थे। उनका प्रयोजन यह होता था कि देखें तो सही लोगों पर हमारे प्रचार का कैसा व कितना प्रभाव पड़ा है। जहाँ भी चार व्यक्ति एकत्र हुए देखते थे, भक्तजी उनकी चर्चा सुनते। आर्यसमाज के उत्सव की तो नगरभर में धूम थी ही।

जो कुछ लोग कहते थे, मेहता अमींचन्दजी अपनी नोटबुक में लिख लेते। अपने ठिकाने पर आकर लोगों की चर्चा व सम्मति पर वे एक गीत रच देते। जब उनके भजनों की बारी आती तो अपनी नवीन रचना बड़े अनूठे ढङ्ग से सुनाकर श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध कर देते थे।

आर्यसमाज लुधियाना के पचास वर्षीय इतिहास में दी गई इस घटना से पता चलता है कि ऐसे लग्नशील और तपस्वी लोगों के पुरुषार्थ से ही आर्यसमाज का सङ्गठन आगे बढ़ता गया। वर्तमान में हमारे अधिकारी, कार्यकर्ता, विद्वान् एवं उपदेशक इसी पद्धति से कार्य करें तो कितना उत्तम रहे। हमारे कार्य की सफलता इसमें है कि हमारे प्रचार से लोग यज्ञ, सन्ध्या,

स्वाध्याय का व्रत लें और मांस, मदिरा आदि दुर्गुणों को छोड़ें।

आर्यसमाज बच्छोवाली का वार्षिकोत्सव था। वहाँ आपने अन्तिम बार अपना भजन सुनाया। वह उनकी अन्तिम रचना कही जा सकती है। गीत बड़ा लम्बा व भावपूर्ण था। उसके कुछ पद्य इस प्रकार हैं—

काल की आज्ञा में कैसे-कैसे जोर-आवर चले।
क्या मजाल इस हुकम की कोई अदूली[1] कर सके॥
मुखतार और वकुला बैरिस्टर कुल मुकदमा हर चले।
झूठ की तकरीर व मन्तक इस जगह क्योंकर चले॥
वैद्य और हुकमा यहाँ पर पढ़कर तिबे[2] अकबर चले।
नुसखा न पाया मौत का हैरान हो डाक्टर चले॥
जमींदार और पत्तीदार नम्बरदार नम्बर पर चले।
अन्त को बेदखल हो, देखो वे धरती धर चले॥
कलयुग चले, सतयुग चले, त्रेता चले, द्वापर चले।
राम चले, रावण चले, अमींचन्द नन्दनन्दन चले॥

जब अपनी कमर में तबला बाँधे भक्तजी झूम-झूमकर यह भजन गा रहे थे तो किसे पता था कि यह उनका अन्तिम भजन है।

मृत्यु से पूर्व उन्होंने अपनी सर्वसम्पत्ति दान में देने का मृत्यु-पत्र (Death will) लिख दिया था, परन्तु उनकी इस अन्तिम इच्छा का पालन नहीं किया गया। २६ जुलाई सन् १८९३ ई० को आपका निधन हुआ। समस्त आर्यजगत् में आपकी मृत्यु का शोक मनाया गया। आपके जीवन में ऋषिजी के एक ही करुणा-कटाक्ष से जो परिवर्तन आया, यह कल्याण-मार्ग के प्रत्येक पथिक के लिए अत्यन्त प्रेरक घटना है। जीवन-निर्माण के इच्छुक इससे जितनी भी शिक्षा लें, थोड़ी है।

उस काल के सब छोटे-बड़े आर्यसमाजियों पर भक्तजी के हृदय-परिवर्तन की घटना व भावपूर्ण भजनों का गहरा प्रभाव था। मुनिवर गुरुदत्तजी, महात्मा मुंशीराम व लाला लाजपतराय सब आपके भजन भावविभोर होकर गाया करते थे। साधु ट० ल० वासवानी (T.L. Vasvani) आर्यसमाजी नहीं थे। आपने भी अपनी एक अंग्रेजी पुस्तक में भक्तजी के एक भजन **'जय जय पिता परम आनन्ददाता'** की ओर संकेत किया है। लाला लाजपतरायजी ने अपने द्वारा लिखित ऋषिजीवन में भक्तजी के दो भजनों की कुछ पङ्क्तियाँ उद्धृत की हैं।

---

१. आज्ञा का उल्लंघन करना, २. यूनानी चिकित्सा का एक प्रामाणिक ग्रन्थ।

भक्त अमींचन्दजी के भजनों के विषय में

आचार्य चमूपतिजी ने भक्तजी के भजनों को भक्ति का भण्डार बताया है। आपके पञ्जाबी गीतों में तो अत्यधिक मिठास है। भक्तजी ईश्वर को बड़े-बड़े सुन्दर नामों से सम्बोधित करते हैं। महर्षि दयानन्द-रचित आर्याभिविनय में प्रयुक्त कई नाम आपके भजनों में मिलेंगे। पञ्जाबी के एक भजन में ईश्वर के लिए 'साईं' का सम्बोधन बहुत मार्मिक व हृदयस्पर्शी है। **'वतन दुराडा साडा, देस दुराडा'**, यह भजन इतना सरस व भावपूर्ण है कि इसपर बड़े-बड़े विद्वानों व दार्शनिकों ने मुग्ध होकर लेखनी चलाई है। आगरा विश्वविद्यालय के एक पूर्व उपकुलपति डॉ० दीवानचन्दजी ने इसपर एक हृदयस्पर्शी लेख लिखा है।

इसमें दो राय नहीं कि भक्तजी के गीतों में छन्दभंग होने का दोष पाया जाता है, परन्तु भक्तजी ने छन्द-शास्त्र का मर्मज्ञ होने का दावा कभी नहीं किया। वे तो आत्मानुभूति से लिखते थे। वे मन को रिझाने के लिए कविता रचते थे। वे किसी कविसभा की समीक्षा के लिए तो भजनों की रचना करते नहीं थे। बड़े-बड़े भक्त, महात्मा, सन्त भक्तिभाव से ही भजनों को रचते आये हैं। मीरा, गुरु नानकदेव, महात्मा कबीर सब इसी श्रेणी में आते हैं। वे किसी के बँधे हुए न थे।

समय-समय पर कुछ सम्पादकों ने उनके भजनों का सम्पादन करके अपनी बुद्धि के अनुसार कहीं-कहीं कोई शब्द बदला है। महर्षि की जन्म शताब्दी पर हुतात्मा महाशय राजपाल द्वारा प्रकाशित 'अमीं रससार' में आचार्य चमूपतिजी ने इसी प्रकार का प्रयास किया था। अभी कुछ समय पूर्व श्रीमान् डॉ० भवानीलालजी भारतीय ने 'भक्त अमींचन्द मेहता और उनका काव्य' में आचार्य चमूपतिजी के 'अमीं रससार' व पं० श्री दौलतरामजी द्वारा सम्पादित संस्करण का ही विशेष लाभ उठाया है।

हमने अपने इस प्रयास में आर्यसमाज लाहौर द्वारा प्रकाशित आर्यसमाज की प्रथम बड़ी भजन-पुस्तक 'आर्य सङ्गीत पुष्पावलि' को अपना मुख्य आधार बनाया है। यह भजन-संग्रह मेहताजी के जीवन-काल में प्रकाशित हुआ था। हमने आर्यसमाज शिमला द्वारा प्रकाशित एक पुराने भजन-संग्रह व अन्य अनेक पुरानी भजनपुस्तकों से मिलान करके भजनों को दिया है। जहाँ कहीं कोई शब्द बदला है, वहाँ नीचे टिप्पणी दी है।

भक्तजी फ़ारसी; उर्दू के सुयोग्य विद्वान् थे, अतः आपके गीतों में यत्र-तत्र फ़ारसी के शब्द बहुत मिलते हैं। हमने इन शब्दों को शुद्धरूप में देने का प्रयास

किया है और कठिन शब्दों के अर्थ भी दे दिये हैं। डॉ० भारतीयजी का प्रयास प्रशंसनीय है, परन्तु उर्दू, फ़ारसी का ज्ञान न होने के कारण उनके द्वारा सम्पादित संकलन में अनजाने से कई स्थूल भूलें हो गईं हैं। सबसे अन्तिम उर्दू ग़ज़ल में ही चार-पाँच शब्द ऐसे छप गये हैं कि उनका अर्थ ही कुछ नहीं बनता तथापि उत्तम साहित्य के प्रचार के लिए किया गया प्रत्येक प्रयास प्रशंसा योग्य है।

भक्तजी के भजनों में पश्चात्ताप का भाव ओत-प्रोत है। इसका कारण भक्तजी के पूर्व जीवन की भूलें तो हैं ही, फ़ारसी कवियों व अपने देश के भक्तिकालीन सन्तों के काव्य का प्रभाव भी इसका एक कारण है। पाठक डॉ० राधाकृष्णन् के एक मार्मिक वाक्य का स्मरण करें, "Every saint has a past and every sinner has a future" अर्थात् प्रत्येक सन्त का एक अतीत होता है और प्रत्येक पापी का कुछ भविष्य होता है। आर्यविचारक पं० गङ्गाप्रसादजी उपाध्याय ने वैदिक दर्शन को आशावादी दृष्टिकोणवाला बताते हुए लिखा है "Here the door of Bliss is always open" अर्थात् यहाँ कल्याण का द्वार सदैव खुला है। जो खोटे कर्म हम कर चुके सो तो हो चुके। उनका फल तो भोगना ही पड़ेगा, आगे के लिए हम अपना सुधार कर सकते हैं। जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है।

भक्तजी ने समाज-सुधार के लिए उस युग की कुरीतियों को दूर करने के लिए विवाह, सगाई आदि अवसरों के लिए कई लम्बे-लम्बे व अच्छे गीत लिखे। उनके कई भजन सामयिक होने के कारण आज उपयोगी नहीं हैं। इसलिए हमने यहाँ नहीं दिये हैं।

माननीय भारतीयजी ने अपने संग्रह में एक भजन दिया है—

हे जगत् स्वामी प्रभुजी।
भेंट धरूँ क्या मैं तेरी॥

यह भजन भक्त अमींचन्द-रचित नहीं है। भक्तजी के जीवनकाल में प्रकाशित भजनपुस्तकों में यह भजन उनके भजनों में नहीं दिया गया। यह भजन उनके गीतों से पृथक् विविध में छपा मिलता है। कई बार ऐसे भ्रम हो जाते हैं। **'तुम हो प्रभु चाँद मैं हूँ चकोरा'** यह भजन भक्तजी का है। इसके अन्त में 'चातक' शब्द आता है। आचार्य पं० चमूपतिजी का एक उपनाम 'चातक' भी था, अतः वैदिक-धर्म उर्दू में एक लेख में इसे पं० चमूपति-रचित लिखा गया था। मेरे ही एक गीत—'आर्यो! संसार का उद्धार करना है तुम्हें' को एक भाई ने अपने नाम से छपवाया है। वह शुद्ध हिन्दी लिख ही नहीं सकते। 'उठो आर्यवीरों धरा तड़पती है' यह मेरी रचना है। इसके अन्त में 'मुसाफिर' शब्द पं० लेखरामजी के लिए प्रयुक्त किया गया है। इससे कई लोग इसे कुँवर

सुखलाल-रचित बता देते हैं।

हमने कई लोप हो रहे गीतों को खोजकर यहाँ दिया है। इससे भक्तजी की रचनाओं की रक्षा भी होगी और उनकी निर्वाण-शताब्दी मनाना भी सार्थक होगा। आशा है कि हमारे कृपालु पाठक हमारे परिश्रम का पूरा-पूरा लाभ उठाएँगे। अल्पज्ञ जीव की अपनी कुछ सीमाएँ होती हैं। हमारी अल्पज्ञतावश इस संग्रह में जो भी न्यूनता रहेगी, गुणियों के सुझाने पर अगले संस्करण में उसका सुधार कर दिया जाएगा। श्रद्धेय पं० चमूपतिजी ने 'अर्मी रससार' के भजनों को प्रकाशित करवाते हुए भक्त मंगतरामजी से राग-रागनियों की जाँच-पड़ताल करवाकर सब भजनों के साथ उनके राग लिख दिये थे। हमने भी अपने संगीतमर्मज्ञ मित्र प्रो० शिवनाथरायजी की सहायता प्राप्त करके राग-रागनियाँ अङ्कित कर दी हैं। संगीत-शास्त्र के इस यशस्वी आचार्य ने अत्यन्त श्रद्धा एवं उदारता से हमें सहयोग दिया। एतदर्थ उनका धन्यवाद!

रामाँ मण्डी, भटिण्डा क्षेत्र के एक पुराने आर्य हमारे कृपालु श्री महाशय किशोरचन्दजी के पौत्र श्री जितेन्द्रकुमारजी एडवोकेट ने इस भजन-संग्रह व ऐसे उत्तम साहित्य के लिए दस सहस्र रुपये की स्थिरनिधि स्थापित करके वेद-प्रचार में ठोस योगदान दिया है। उन्हें हम किन शब्दों में धन्यवाद दें? वैदिक ग्रन्थों का प्रकाशन करके हमारा यह नया-नया संस्थान यश लूट रहा है। ईश्वर इस संस्थान को चिरायु करें। रक्तसाक्षी पं० श्री लेखरामजी के अन्तिम आदेशानुसार हिण्डौन के आर्यभाई आर्यसाहित्य के प्रकाशन व प्रसार के लिए अदम्य उत्साह दिखा रहे हैं। इनका यह उत्साह क्षणिक न होकर स्थायी सिद्ध हो,. यह मेरी हार्दिक कामना है।

मेरे साहित्यिक जीवन में समय-समय पर अनेक बाधाएँ आईं, परन्तु ईश्वर की कृपा से सब विघ्न-बाधाओं को चीरता हुआ मैं आगे ही बढ़ता जा रहा हूँ। दुर्बलताओं को ढोते हुए एक ग्रामीण व्यक्ति ऋषि-मिशन के लिए अबतक पचास से ऊपर पुस्तकें आर्यजनता के हाथों में पहुँचा चुका है। यह सब बड़ों के आशीर्वाद का फल है। विघ्न आये और आगे भी आएँगे परन्तु—

लगाते हैं गोता उछलने की खातिर।
पिघलते हैं साँचे में ढलने की खातिर॥

जीवन के अन्तिम श्वास तक वीर-विप्र लेखराम के आदेश का पालन करता रहूँ, प्रभु से मेरी यही प्रार्थना है। मैं गोपीचन्द आर्य कालेज अबोहर से सेवानिवृत्त हुआ। मेरे रिटायर होने से पूर्व कालेज में पञ्जाब के राज्यपाल श्री सिद्धार्थशंकर राय आये। कालेज की वार्षिक रिपोर्ट के लिए रिपोर्ट तैयार

करनेवाली मैडम ने तीन–चार बार मुझे अपनी साहित्यिक उपलब्धियों का कुछ विवरण देने के लिए विनती की। मैं न–न करता रहा, परन्तु बार–बार के आग्रह के कारण मैंने कहा कि इस वर्ष मेरी छह पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं और विश्व पुस्तक मेले में फ्रैंकफुर्त (जर्मनी) में भी मेरा साहित्य गया है। कालेज की रिपोर्ट से प्राचार्या ने यह सब–कुछ निकाल दिया। डी० ए० वी० के ऐसे–ऐसे धर्मद्वेषी प्रिंसिपलों व सञ्चालकों की इस नीति–रीति व दुर्व्यवहार से भी मैं कभी विचलित नहीं हुआ। प्रिंसिपल कृष्णा सचदेवा जैसों के ऐसे व्यवहार से मैंने और अधिक उत्साह से अपने कर्त्तव्यों को निभाकर दिखाया। मैंने यह सब–कुछ सुना, परन्तु मेरे मन पर इसका विपरीत प्रभाव न पड़ा।

रिपोर्ट तैयार करनेवाली मैडम ने मुझे बताया कि प्रिंसिपल ने आपकी उपलब्धियों का विवरण काट दिया। यह भी कहा कि स्टाफ में और किसी की कोई उपलब्धि विशेष नहीं है। तम्बोला (जुआ) से कालेज के लिए धन एकत्र करनेवाले देश, धर्म के लिए किसी की सेवा का मूल्याङ्कन क्या कर सकते हैं? ईश्वर की दया व न्याय को ये लोग क्या जानें? इस भजन–संग्रह के पश्चात् हमारे पाठक आचार्य चमूपतिजी के कालजयी लेखों व कविताओं के हमारे द्वारा अनूदित व सम्पादित संग्रह के द्वितीय खण्ड की प्रतीक्षा करें।

आचार्य पं० चमूपतिजी के जन्मदिवस पर
२०४६ विक्रमी

विनीत
राजेन्द्र 'जिज्ञासु'
वेदसदन, अबोहर–१५२११६

(१)

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्॥

ओम् अकार उकार मकार।
तीन मात्रों का एक ओंकार॥
परमेश्वर का उत्तम नाम।
जप रे मन इसको अविराम॥
अर्थ विचार करें जो जाप।
क्यों न मिटें उनके सब ताप॥
भूः है प्राणों का भी प्राणं।
भुवः करे दुःख से परित्राण॥
स्वः है आप सदा सुखरूप।
धर्मियों को करे मुक्तस्वरूप॥
तत् उस ईश्वर से हम लोग।
भक्तिभाव से करें संयोग॥
सवितुः जग का सिरजनहार।
रवि-शशि हैं जिसका चमकार[१]॥
वरेण्यं ग्रहण करने के लायक।
भर्गः शुद्ध पवित्र सहायक॥
देवस्य ज्योतिर्मय और ज्ञान।
धीमहि उसका धरें हम ध्यान॥
धियः बुद्धियों का अवगुण हरे।
यो नः पूर्वोक्त सहायता करे॥
प्रचोदयात् का प्रेरणा अर्थ।
शुभगुणों की देवे सामर्थ॥
प्राप्त करें हम धर्म और अर्थ।
बीत न जाए जनम व्यर्थ॥
तन-मन-धन से करें उपकार।
गायत्री का अर्थ विचार॥
अमींचन्द सन्ध्या कर दो काल।
सत्य-धर्म के नियम पाल॥

---

१. चमकार का अर्थ प्रकाश है। वैसे कई सम्पादकों ने 'रवि-शशि जिसके आविष्कार' करके भी छापा है।

(२)

रागिनी=संधूर, ताल=चार

तू ही दाता सब बद्ध नियम धर्म-कर्म दया जितनी करे
इत तू ही, उत तू ही, तुम्हारी है रचना
शाह बादशाह सभी माँगन को आवत जग तेरो दरे[१]

卐

(३)

रागिनी=रामकली, ताल=छम्ब

लगा मेरा प्रीतम से प्रीति का तार है। जिसने दिया मुझको पलभर में तार है॥
श्रद्धा व भक्ति मसाला[२] के बल से। हिलने लगा मेरी रग-रग का तार है॥
तन की है बेड़ी[३], मन का है हैण्डल। चित्त की कला नाम-सिमरण की कार है॥
हिला आरमेचर समाचार आया। आनन्द मिला ज्ञान नाना प्रकार है॥
विचारा तो निकला है तीन मात्र अक्षर। निश्चय हुआ नाम जिसका ओंकार है॥
रीसीवर[४] इस तरह चेतन उद्धारक। डिसपैच करता सकल कलाधार है॥
मनुष्य जन्म की निभाले[५] ड्यूटी। खुला है वह तेरे लिए मुक्ति का द्वार है॥
गाफ़िल न सोना यहाँ पर अमींचन्द। घण्टी पुकारे यही बार-बार है॥[६]

卐

---

१. इसका अर्थ द्वार है। २. साधना-सामग्री। ३. नौका। ४. Receiver ५. मूल में उर्दू का 'अदा कर ले' छपा मिलता है। ६. इस भजन में भी भक्तजी ने अपने हृदय परिवर्तन का सरस वर्णन किया है। हृदयस्पर्शी कृपाकटाक्ष से मनुष्य क्या से क्या बन जाता है। यह सबके लिए एक बहुत बड़ा उपदेश है। जिज्ञासु

(४)

रागिनी=देशी, ताल=झप

हे दीनाबन्धु! हे करुणासिन्धु! संसार-सागर से करो वेड़ा पार
चहुँ ओर जलधार, सूझत न वार-पार
उलटी पवन नाऔ फटी खाए गेड़ा[1]
राखो नाथ राखो नाथ, डूबती को दीजो हाथ
पीछा रहा दूर आया आगा नेड़ा[2]
अपने आधीन दीन की, देखो दशा-हीन
सुख से उतारो पार मिटे यही बखेड़ा

卐

(५)

राग=समय अनुकूल, ताल=तीन

दया करो प्रभु अन्तर्यामी। महामलीन मैं कापट कामी॥
मानस जन्म देवो तुम उत्तम। और कियो सम्पत्त सुखधामी॥
तदपि त्याग तव नाम दयामय। रहूँ सदा विषयन अनुगामी॥
पाप-ताप से भयौ अति पीड़ित। अव मम पीड़ थमत नहीं थामी॥
हो हताश निराश जगत् से। आयो शरण तुम्हारी स्वामी॥

卐

---

१. चक्र खाती बीच भँवर। २. आगे जो कुछ है, अर्थात् मृत्यु निकट है।

(६)

रागिनी=कोशिया कान्हड़, ताल=तीन

दीनानाथ दीनाबंधु दीनन के दयाल जी।
आया चल तेरी शरणागत हे पिता मैं बाल जी॥
सच्चिदानन्दरूप अखण्ड एकरस तुम तेरी दृष्टि।
नीचे हैं भूत आदि तिरा[१] काल जी॥
आद मध्य अन्तरहित तुम अनादि अनन्त हो।
जिसको कहते हैं अनुपम यानी[२] बेमिसाल जी॥
भक्ति मुक्ति तेरे द्वार सृष्टिकर्त्ता जगदाधार।
तेरा ही विस्तार है यह मात[३] आकाश पाताल जी॥
काम क्रोध लोभ अहंकार पाँचों शत्रु[४] हमरे मार।
देख दरिद्र दीजे न टार कीजिए खुशहाल जी॥
प्राणपति प्राणनाथ, हमारी नाथ, तुम्हारे हाथ।[५]
दीजे हमको पूरा साथ, राखो सदा नाल[६] जी॥
कीजिए यह उत्सव पूर्ण आर्य की सन्तान का।
निरुपद्र होवें कारज भक्तन के रछपाल जी॥

卐

(७)

रागिनी=खट, ताल=तीन

मोहे सम कौन कुटिल खल कामी।
तुमसे कहाँ छुपें करुणानिधि सबके अन्तर्यामी॥
जे तन देन ताहे बिसराईओ, ऐसो लून[७] हरामी।
फिर-फिर विरोध विषय में धावत, जैसे सूकर ग्रामी॥
मन सत्संग होत जये आलस, विपयन सङ्ग विश्रामी।
पापी पतित अधम अपराधी, सब पतितन में नामी॥
स्वयं अधम पर करुणा कीजे, मनलो[८] जगपति स्वामी।
मोहे सम कौन कुटिल खल कामी॥

卐

---

१. तीन। २. अर्थात्। ३. मर्त्यलोक। ४. पाँचवाँ शत्रु मोह सर्वविदित है। ५. हमरी नाथ, तुमरे हाथ, अधिक उपयुक्त लगता है। ६. नाल पञ्जाबी भाषा का शब्द है। इसका अर्थ साथ है। यह तुक मिलाने के लिए लिया है। ७. नमक। ८. यह पञ्जाबी प्रयोग है—मान जाओ।

(८)

राग=केदार, ताल=चार

नाना ही चेतन, नाना ही जड़, नाना ही सीस, नाना ही धड़
नाना ही नैत्र, नाना ही कान, नाना ही हाथ-पाँव हैं
नाना समुन्दर, नाना पहाड़, कोसों की बस्ती, कोसों उजाड़
सारे ही ठहरे तेरे आधार, अनेक लोग गाओ हैं
नाना द्वीप, नाना ही खण्ड, तेरे ही भीतर सारा ब्रह्माण्ड
नाना ही सूरज, नाना ही चन्द्र का निवास थाओ[१] है
अति ही निकट, अति ही दूर, अन्तर बाहर रहा है पूर
इसी विचित्र शक्ति के विराट् आदि नाओं[२] हैं

卐

(९)

किस सोच विचार में बैठे हो, मन शुद्ध करो भाई इक छिन को
लग चिन्ता की सब दूर करो और त्यागो ध्यान विषय धन को
परित्राण के प्रति सब व्याकुल हो, तुम आकुल हो प्रभु-दर्शन को
प्रभु-पूजा में अनुराग करो और प्रस्तुत हो प्रभु-कीर्तन को
भक्ति और प्रेम के फूलों से भरपूर करो हृदय[३] कानन को
एकान्त सुधारस पान करो और शान्त करो अपने मन को

卐

(१०)

राग=भैरव, ताल=चार

दीन बन्धु दीनानाथ दीन दयाल दीन आधार
प्राणपति प्राणनाथ प्राणों से प्यारे प्राणाधार
जगपति जगन्नाथ जगतपाल जगदाधार
निसलम्भ निराधार निर्विकार निराकार

卐

---

१. पञ्जाबी प्रयोग है, स्थान के अर्थ में। २. नाम हैं। यह पञ्जाबी प्रयोग है।
३. यहाँ हिय शब्द अधिक उपयुक्त रहेगा।

(११)

राग=भैरव, ताल=चार

प्रथम नाद ही आकाश ते प्रकटयो ओंकार
परमब्रह्मरूप जाको, ध्यावत सब योगी।
नाद ही अनहद सों नाद भयौ दो रूप
अनहद के सेवन सो तत् पद सुध होगी॥

卐

(१२)

राग=कोशिया कान्हड़ा

परस्पर मिलके प्रीति से

परस्पर मिलके प्रीति से यह गुण ईश्वर का गाते हैं।
लगन में पतित-पावन के भजन कीर्तन सुनाते हैं॥
लिखा है ओ३म् का अक्षर जो उनके साफ़ सीने पर।
परम पदवी के उपयोगी इसी पै दिल लगाते हैं॥
गले में फूलों की माला, भजन-संग्रह है हाथों में।
हरि यश कैसा गाते हैं, अहो आनन्द पाते हैं॥
बहुत से लोग पूछे हैं, यह उत्सव आज है किसका?
सभासद आज क्यों सारे, नहीं फूले समाते हैं॥
गुणीजन देश-देशों से, यहाँ तशरीफ लाते हैं।
ये उनकी पेशवाई को नगर के लोग जाते हैं॥
चलो चल देखिए मेला सामाजिक आर्य-मन्दिर में।
धर्म का निर्णय करते हैं, सकल संशय मिटाते हैं॥
जो उपदेशों को सुनते हैं, पूरे[1] विश्वास निश्चय से।
वही उस मोक्ष के घर का सफा मार्ग बनाते हैं॥
सुनो प्यारे परम सज्जन, जो तुमको हम सुनाते हैं।
भजन बिन नीके-नीके दिन यह यूँ ही बीत जाते हैं॥
वहुत सोना नहीं अच्छा, सफ़र में जानेवालों को।
इसी मनज़िल पै कई राही धरम धन को लुटाते हैं॥
अमींचन्द धन्यवाद उनका करें, हम कौन-से मुख से?
जो परस्वार्थ के कारज का सदा बीड़ा उठाते हैं॥

---

१. यहाँ अटल या 'बड़े' शब्द हो जावे तो अच्छा है।

(१३)

राग=विहाग, ताल=धमार

जय जय सच्चिदानन्द ज्ञानप्रद अधमोद्धारक
जय जय दुष्ट सुताड़न गर्व कुलोभ विदारक
जय जय आश्रम वर्ण सनातन धर्म प्रचारक
जय अमींचन्द अनन्त विविध मत पन्थ सुधारक

卐

(१४)

राग=भैरव, ताल=धमार

अग्नि में भी रहे सदा पर आग में भी न जले।
है अचल निष्कम्प वायु के हिलाए न हिले॥
मिट्टी में रहकर है निर्मल, शुद्ध दर्पण की तरह।
रहे सदा जीव जल बीच पर पानी में तिल भर न गले।
जैसे है आकाश व्यापक, वैसे वह आकाश में।
बिजलीवत् हर तार में, न्यारी जगह कुछ न मिले॥
सबके ऊपर सबके भीतर सब जगह व्यापक वही।
रहे तला तल के तले, बल्कि[१] रसातल के तले॥

(१५)

राग=रामकली, ताल=झप

जय जय पिता परम आनन्द दाता। जगदादि कारण मुक्ति प्रदाता॥
अनन्त और अनादि विशेषण हैं तेरे। सृष्टि का स्रष्टा तू धर्ता संहर्ता॥
सूक्ष्म-से-सूक्ष्म तू स्थूल[२] है इतना। कि जिसमें यह ब्रह्माण्ड सारा समाता॥
मैं लालित व पालित हूँ पितृस्नेह का। यह प्राकृत सम्बन्ध है तुझसे ताता॥
करो शुद्ध निर्मल मेरे आत्मा को। करूँ मैं विनय नित्य सायं व प्रातः॥
मिटाओ मेरे भय ये आवागमन के। फिरूँ न जन्म पाता और बिलबिलाता॥
बिना तेरे है कौन दीनन का बन्धु। कि जिसको मैं अपनी अवस्था सुनाता॥
'अमीं' रस पिलाओ कृपा करके मुझको। रहूँ सर्वदा तेरी कीर्ति को गाता॥

---

१. यहाँ 'प्रत्युत' सर्वथा उपयुक्त हो सकता है। २. सब संस्करणों में 'स्थूल' शब्द ही छपा है। सैद्धान्तिक दृष्टि से कवि ईश्वर की सर्वव्यापकता का बोध कराना चाहता है।

(१६)

रागिनी=देशकाल, ताल=झप

तुम हो प्रभु चाँद मैं हूँ चकोरा। तुम हो कँवल फूल मैं रस का भौंरा॥
ज्योति तुम्हारी का मैं हूँ पतङ्गा। आनन्द घन तुम हो, मैं वन का भौंरा॥
जैसे हो चुम्बक की लोहे से प्रीति। आकर्षण करे मोहे लगातार तोरा॥
पानी बिन जैसे हो मीन व्याकुल। ऐसे ही तड़पाए तुमरा विछोड़ा॥
इक बूँद जल का मैं प्यासा हूँ चातक। अमृत की करो वर्षा[१] हरो ताप मोरा॥

(१७)

रागिनी=देशी, ताल=झप

तुम्हारी कृपा से जो आनन्द पाया। वाणी से जाए वह क्योंकर बताया॥
नहीं है यह वह रस जिसे रसना चाखे। नहीं रूप उसका कभी दृष्टि आया॥
नहीं है यह गुण गन्ध जो घ्राण जाने। त्वचा से न जाए छुआ वो छुआया॥
संख्या में आना असम्भव है उसका। दिशा-काल में भी रहे न समाया॥
तुझ-सा न दाता है तुझ-सा न दानी। इतना बड़ा दान जिसने दिलाया॥
आत्मोन्नति में तुम्हारी दया से। मेरी ज़िन्दगी ने अजब पलटा खाया॥
सत्-चित् आनन्द अनन्तस्वरूप। मुझे मेरे अनुभव ने निश्चय कराया॥
गूंगे की रसना के सदृश 'अमींचन्द'। कैसे बताए कि क्या रस उड़ाया॥[२]

(१८)

रागिनी=पीलो, ताल=दादरा मात्रा=६

दोऊ कर जोड़ विनय करूँ तोरे। सब अपराध क्षमा करो मोरे॥
मैं छलिया कपटी अति कामी। तुम हो पतितोद्धारक नामी॥
तुम्हें छोड़ किस द्वारे जाएँ। मन की व्यथा हम किसे सुनाएँ॥
हम सेवक हैं अनुगत बालक। तुम स्वामी रक्षक प्रति पालक॥
आन गिरे हम शरण तुम्हारी। जन्म-मरण का है दुःख भारी॥
विनय करें प्रतिदिन उठ प्रातः। हमको कण्ठ लगाओ ताता॥
हे मङ्गलमय मङ्गल के दाता। तुम हो मात पिता मम भ्राता॥
चार पदार्थ आप ही दीजे। दर-दर का नहीं भिक्षुक कीजे॥

१.पुराने संस्करणों में 'वर्खा' छपा मिलता है। २. कहा जाता है कि यह भजन कवि ने ऋषि दरबार में सुनाया था। तब कवि के नयनों से पश्चात्ताप के अश्रु टपटप गिर रहे थे। भजन ने ऐसा समय बाँधा कि लेखनी वर्णन करने में अक्षम है। 'मेरी जिन्दगी ने अजब पलटा खाया'। यह पंक्ति कवि के हृदय-परिवर्तन की ओर ही संकेत करती है।

(१९)

रागिनी=भैरवी, ताल=धमार

अपनी उपासना, अपना ही जाप।[1]
सिखाओ प्रभु पूजा की विधि आप॥
शिक्षा हमारी तुम्हारे अधीन है।
मैं हूँ बाल-बुद्धि तुम हो ज्ञानी बाप॥
प्रीति की रीति बता दीजे हमको।
जिस विधि से हो तुम्हारा मिलाप॥
ज्योति का सौन्दर्य देखूँ तुम्हारा।
करूँ मिलके तुमसे मैं वार्तालाप॥
तुम्हारी कृपा की नहीं कोई सीमा।
नहीं तेरी करुणा का कोई तोल-माप॥
तन की तपत और मन की आपत को।
मिटाओ मिटाओ प्रभु तीन ताप॥
करें तेरी आज्ञा का पालन सदा हम।
कर न सकें हम कभी कोई पाप॥
वृथा जाता है जन्म जिनका भजन बिन।
वे चलते करेंगे महा पश्चात्ताप॥
'अमींरस' की वर्षा वहाँ क्यों न होवे।
जहाँ तेरा होवे मनोहर आलाप॥

(२०)

रागिनी=भूपाली, ताल=झप

तू है सनातन, तू ही है अनुपम, तू राजों का अधिराज, सरकार उत्तम॥
छोटा-सा कमरा है ब्रह्माण्ड उसका, जो तेरी मशीन है दरबार उत्तम॥
पवन देवता तेरा पंखा कुली है, वर्षा भरे पानी पनिहार उत्तम॥
अङ्गीठी जलाने पै नौकर है अग्नि, सूरज का दीपक जगे द्वार उत्तम॥
फुलवाड़ी का फर्श कोमल से कोमल, बना बेलबूटे का गुलज़ार उत्तम॥
पुष्पावली है लवण्डर की शीशी, ऋतुराज है तेरा मलियार उत्तम॥
तेरी लायबरेरी की पुस्तक मुकद्दस, मिले सृष्टि के आद में चार उत्तम॥
ऐश्वर्य तेरा अपरिमित है इतना, करें किस बुद्धि से विस्तार उत्तम॥
अखण्ड एकरस की लगी हमको प्यासा, अमींरस पिलाओ करो प्यार उत्तम॥

---

१. 'अमीं रस सार' में आचार्य श्री चमूपतिजी ने इसे लगभग सारा ही बदल दिया है। हमने मूल को सुरक्षित रखना उचित जाना है।

रागिनी=भैरवी

तू ही सब जगत् का स्वामी है, तू ही सर्वान्तर्यामी है, होता नहीं परिणामी है
तू ही सत् चित् आनन्द है
तू ही सर्वदा एकरस है, तुझमें न नाड़ी-नस है, नहीं लोभ-मोह के वश है
तू ही सत् चित् आनन्द है
तू ही निर्विकार अरूप है, नहीं काया छाया धूप है, तू ही शुद्ध-मुक्तस्वरूप है
तू ही सत् चित् आनन्द है
नहीं काला पीला वर्ण है, नहीं आँख जिह्वा कर्ण है, नहीं उत्पत्ति नहीं मरण है
तू ही सत् चित् आनन्द है
नहीं तुझको देह अध्यांस है, नहीं भूख है नहीं प्यास है, नहीं तनिक भी अभिलाश है
तू ही सत् चित् आनन्द है
न तू वृद्ध है न बाल है, सदा मृत्युरहित अकाल है, किन्तु काल का भी काल है
तू ही सत् चित् आनन्द है
न गर्मी है, न शीत है, तू तो तीनों गुणों से अतीत है, हमें ठीक-ठीक प्रतीत है
तू ही सत् चित् आनन्द है
नहीं हर्ष है, नहीं शोक है, नहीं ताप है, नहीं रोग है, कर्मों का भोगी न भोग है
तू ही सत् चित् आनन्द है
तुझ-सा न कोई विद्वान् है, तुझ-सा न कोई बलवान् है, तू ही सर्वशक्तिमान् है
तू ही सत् चित् आनन्द है
नहीं तुझमें रञ्च क्लेश है, अज्ञान का नहीं लेश है, तू ही रहता इकरस शेष है
तू ही सत् चित् आनन्द है
हर एक तेरा देश है, तू ही विश्व का विश्वेश है, नहीं राग और नहीं द्वेष है
तू ही सत् चित् आनन्द है
इस दृष्टि से तू अदृष्ट है, पर सब जगह प्रविष्ट है, तू ही सृष्टि का इक इष्ट है
तू ही सत् चित् आनन्द है
नहीं तुझमें आधि-व्याधि है, नहीं साथ तेरे उपाधि है, नहीं तू कभी अपराधी है
तू ही सत् चित् आनन्द है
तू ज्ञानियों का ज्ञेय है, तू ही ध्यानियों का ध्येय है, नहीं तेरा कोई उपमेय है
तू ही सत् चित् आनन्द है

नहीं तुझ-सा कोई एक है, मुझसे तो जीव अनेक हैं, नहीं इसमें कुछ मिस्टेक[1] है
तूँ ही सत् चित् आनन्द है
क्योंकि मैं तुच्छ अल्पज्ञ हूँ तू सर्ववित् सर्वज्ञ है, किन्तु तू त्रिकालज्ञ है
तू ही सत् चित् आनन्द है
तू ही पूज्य तू ही उपास्य है, यह जीव तेरा दास है, हमको यह दृढ़ विश्वास है
तू ही सत् चित् आनन्द है
जैसेकि आप महान् हैं, कीर्तन भी वैसा प्रधान है, क्या नाम शोभामान है
तू ही सत् चित् आनन्द है
गाते जो तेरा गान हैं और सुनते धरके ध्यान हैं, सदा करते 'अमींरस' पान हैं
तू ही सत् चित् आनन्द है

卐

(२२)

रागिनी=आसा, ताल=धमार

क्यों सोया उठ जाग समय चला जाता है भाई
जिस जीवन को स्थिर तू माने, है बादल की छाई
यह संसार असार है सारा, ज्यूँ सपना रैनाई
बालसखा संग झूठे खेल में बीत गई लड़काई
विषयों में खो गई जवानी, वृद्ध अवस्था आई
जो कुछ होगा वृद्ध अवस्था, देता हूँ समझाई
सख़्त वस्तु कोई खाई न जावे, तोड़े दाँत मिठाई
कान भी बिन ऊँचे शब्दों के, बात न सुनत सुनाई
हाथ-पाँव देह काँपे सारी, आँख न देखे राई
वात पित कफ रोगों की पीड़ा, अति होगी दुखदायी
निकट बैठ कोई बात न पूछे, माँगे न मिलत दवाई
घर के बाहर वास मिलेगा, टूटी-सी चारपाई
कपड़े मिलेंगे बहुत निकम्मे, चिथड़े लेफ[2] दोलाई
हो परवश पड़ा खटिया पर, रो-रो देत दुहाई
पछताने से अब क्या होवे, बैठा खेप लुटाई
कुनबा कहत बहत्तर वर्ष का, बाबा हुआ सुदाई
जो माया है प्राणों से प्यारी, पल में होत पराई
बार-बार पूछत सम्बन्धी कह[3] कुछ धरी-धराई
अमींरस पीकर अमृत हो जा, काल से होत रिहाई

---

१. गलती (Mistake) २. रज़ाई व गद्दे के लिए पञ्जाबी शब्द। ३. यहाँ मूल में पञ्जाबी शब्द दस था। उसका हिन्दी पर्याय बाद में सम्पादकों ने रख दिया।

(२३)

रागिनी=सोहनी, ताल=चार

भूख लगे प्यास लगे सीत जल घाम लगे, मो पै नहीं मिटे, प्रभु मिटे तो मिटाईये
चाहे दे दीजे, चाहे लीजे, अपनी देह निपट निरञ्जन जो अनन्त न डुलाइये
राआरो भिखारी हू कूँ पै हू भीख माँगू यही भीख माँगू मो पै भीख न मंगाइये
सिद्धन के साधन सन्त और महन्त के, जो लौं हों जीव तब लौं जीविका भी चाहिए

卐

(२४)

रागिनी=कान्हड़ा, ताल=स्वर फ़ाख्ता

इस नगरी के नौ दरवाजे दसवाँ इसमें गुप्त द्वार
अन्दर इसके हैं अति सुन्दर, अन्तःकरण के चार बाजार
प्रथम मन है, दूई बुद्धि, तृतीय चित्त चौथा अहंकार
मनमण्डी में तुले है सौदा, जो जिसको होवे दरकार[1]
बुद्धि से करो माल परीक्षा, है यह सार या है असार
चित्त के भीतर सोचके देखो, है अपकार वा है उपकार
दस इन्द्रिय इसमें सौदागर, करते हैं सदा वणिज-व्यापार
इस बस्ती के पाँच उचक्के, माल की गठरी लेते मार
'अर्मीचन्द' खेप बचाओ अपनी, रहना इनसे तुम होशियार

卐

(२५)

रागिनी=जोगिया, ताल=धीमा तीन

जो हरि गीत प्रीति से गाए। तिस के शोक निकट नहीं आए ॥[2]
सुधा सरस चरित मनोहर। मन का ताप बुझाए ॥
हे प्रभु हम अत्यन्त दुखी हो। तव चरणों में आए ॥
मंगल दाता प्रेम प्रदाता। तू ने नाम धराए ॥
माँग रहे द्वारे पर याचक। फिर क्यों देर लगाए ॥
विषयों से उपराम रहें नित। भक्ति हृदय में छाए ॥
वेद-शास्त्र का पाठ 'अर्मीचन्द'। संशय सकल मिटाए ॥

---

१. वाञ्छित, अभिलषित। २. इस भजन का पाठ हमने आचार्य श्री चमूपति के 'अर्मीरस सार' वाला ही रक्खा है।

(२६)

राग=तोड़ी, ताल=रूपक

आज मिल सब गीत गाओ उस प्रभु के धन्यवाद।
जिसका यश नित गाते हैं गांधर्व गुणिजन धन्यवाद॥
मन्दिरों में कन्दरों में पर्वतों के शिखर पर।
देते हैं लगातार सौ-सौ बार मुनिवर धन्यवाद॥
करते हैं जङ्गल में मङ्गल पक्षीगण हर शाख पर।
पाते हैं आनन्द मिल गाते हैं स्वरभर धन्यवाद॥
कूप में तालाब में सिंधु की गहरी धार में।
प्रेमरस में तृप्त हो करते हैं जलचर धन्यवाद॥
शादियों में जलसयों में यज्ञ औ' उत्सव के आद।
मीठे स्वर से चाहिए करें नारी-नर सब धन्यवाद॥
गान कर 'अमींचन्द' भजनानन्द ईश्वर-स्तुति।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता कान धर-धर धन्यवाद॥

(२७)

रागिनी=आसावरी, ताल=रूपक

जगदीश के रट नाम को। करके समाप्त काम को॥
पाएगा शान्ति धाम को। पुनः जाप कर पुनः जाप कर॥
जिसको सङ्ग सहेल है। वही कन्या खेले खेल है॥
वही इम्तहाँ में फेल है। रोती फिरे है जन्म भर॥
विद्या की जिसको लाग है। उसे धर्म का अनुराग है॥
धन्य-धन्य उसका भाग है। कहती हैं सब नारी व नर।
करती जो नित अभ्यास है। वही इम्तहाँ में पास है॥
उसपर यह दृढ़ विश्वास है। गई है सुधर गई है सुधर॥
अक्षर का जिसको ज्ञान है। वही कन्या बुद्धिमान् है॥
उसका ही आंदरमान है॥ सारे जगत् में घर-ब-घर॥
मुख वाक् जिसका रसीला है। वही नारी सबमें सुशीला है॥
वश उसके सारा कबीला है। नन्दी जेठानी सास-ससुर॥
जिसका पति-संग प्यार है। पतिव्रत उसका सिंगार है॥
अमींचन्द वह चतुर नार है, जायेगी तर जायेगी तर॥

(२८)

रागिनी=आसा, ताल=तीन, (पंजाबी भजन)

प्रभु लै लै नाम तेरा। मैं दयाँ चरखे नूँ फेरा॥
तुध चरखा मेरा घड़या। मैं ताँ तेरा लड़ फड़या॥
चरखे दी कीमत भारी। मैं न दे सकाँ बिचारी॥
अनमोल जीभ दी चमड़ी। मैं मुल न पाया दमड़ी॥
मैं कतनियाँ चाईं चाईं। तरकले विच वल्ल न पाईं॥
मेरे फिरे न मनका भौरी[1]। मेरी अकल न होवे बौरी॥
मेरा वेड़ माह्ल न भड़के। मैं कतनियाँ उठके तड़के॥
घड़ दे कारीगर पीढ़ी। जेहड़ी सुख दी होवे सीढ़ी॥
कोई पक्की लकड़ी लाईं। उत्ते गूढ़ा रंग चढ़ाईं॥
रँग चाढ़ी तू दिल देके। खुश होवन सौह्रे पेके॥
सैयाँ वेख के होवन राज़ी। ओह मेरी करण मुथाजी॥
मैं पहले पूनी लाही। सौरे घराँ आया नाई॥
मेरे नाल दियाँ जो सैयाँ। ओहनाँ कत्त पछियाँ भर लइयाँ॥
एह चरखा होया पुराना। कहे 'अमींचन्द' किसदा भाना॥

卐

(२९)

राग=रामकली, ताल=चार

यह गति कर्म की न्यारी, कोई कंगाल कोई भूपाल छत्रंधारी।
जो जो लिखी है कर्म रेख, तिसमें नहीं है मीन मेख॥
लिया है ठीक-ठीक वेख सौ सौ बारी..................
कोई कुलीन धन से हीन, वस्त्र क्षीण, तन से मलीन
कोई है नीच, सुख के बीच, सुखिया भारी
कोई रूप में अनूप, कोई है अंधा बहरा मूक
कोई 'अमीर' राजकुँवर कोई भिखारी..................

卐

---

1. चरखे के तकले पर चढ़ाई गई वाशर-सी होती है। इसे तकले का मनका भी कहते हैं।

(३०)

राग=भैरव, ताल=शूल

उठ री वाले अव तो जाग। भोर भई है निद्रा त्याग॥
उठ री सजनी बीती रजनी। वोलत चिड़ियाँ वोलत काग॥
निकसी किरणें सुरजन जागे। जाग उठा तव सुप्त सुहाग॥[1]
प्रातः काल का गा ले राग। जिससे हो पति से अनुराग॥

卐

(३१)

राग=खमाच, ताल=तीन

करनी का ढङ्ग निराला है, करनी का ढङ्ग निराला है॥
कोई दिगम्वर, कोई पीताम्वर, पहने शाल-दोशाला है॥
कोई भूपति है कोई सेनापति, कोई गड़रिया ग्वाला है॥
कोई अन्धा कोई लूला लङ्गड़ा, कोई गोरा कोई काला है॥
कोई भूखा प्यासा व्याकुल है, कोई मद्य पी मतवाला है॥
कोई मद्यपिं, भंगी चरसी, कोई पीवे प्रेम प्याला है॥
जव तक फिरे न मन का मनका, क्या तस्वीह क्या माला है॥
निस दिन भजे जो हरि को अमींचन्द, सोई करनीवाला है॥

卐

१. हमने यहाँ पं० चमूपतिजी का पाठ ही प्रायः रक्खा है।

राग=भैरवी, ताल=तीन

साहिब मेरी सुनिए अपील, राज अधिराज सुनिए अपील ॥
तुम हो अन्तर्यामी सबके, जाननहार दलील ॥
मैं अनाथ दल दुशमन भारी, तुम जज हो जगत् के न्यायकारी ॥
तुमरे अदल[१] में सभी हैं बराबर, क्या चींटी क्या पील[२] ॥
जुल्म रसीदा मैं मज़लूम[३], भारी खर्चा सखत रसूम ॥
मुफ़लिसी[४] के सीगे में सुनिए, तब होवे तकमील[५] ॥
तेरा ज्ञान कुदरती कानून, शिक्षा का पूरा मज़मून ॥
दुष्ट पुरुष के ताड़न कारण है काबिल तामील[६] ॥
मुद्दत से लड़ रही मुकद्मा, इस छिनाल का सखत है सदमा[७] ॥
तृष्णा नामी मेरी है मुदैया, पापिन कुटिल कुचील ॥
वेश्या के तुल रूप बनाए, जो चाहे सोई नाच नचाए ॥
विपद भञ्जन मेरी करो बरीयत[८], पीछे पड़ी है रज़ील[९] ॥
इसके संग अविद्या भगिनी, इससे अधिक है दुगनी ठगनी ॥
हठ धर्मी का करें मुकदमा, दोनों मिल बैठे हठील ॥
काम क्रोध और लोभ हंकार[१०], गवाह गुज़रे हैं इसके चार ॥
और भी कई एक मेरे हैं वैरी, करूँ किनकी तफसील ॥
हवस बेजा[११] तुल इसकी है कैद, छूटन की नहीं उम्मीद ॥
प्रातः काल के दीपकवत्, प्रभु है मेरी तमसील ॥
प्रभु मिसल सारी सुन लीजिए, जो चाहे सो फैसला कीजिए ॥
मियाद उमर की गुज़र न जाए, रही सही कदरे कलील[१२] ॥
देख कर्म मस्तक तहरीर[१३], करो फैसला लिखो हुकम अखीर ॥
जैसे साक्षी देते हैं मेरी, सत्य धर्म और शील ॥
अमींचन्द दासन के अनुदासा, करो मुक्त होवे पूर्ण आसा ॥
तुम हो न्यायाधीश जजों के, तुम मुखतार वकील ॥

卐

---

१. न्यायकारी। २. हाथी, (श्रीमान् भारतीयजी ने पील की बजाए फील किया है। मूल में पील ही छपा है। अर्थ फील का भी वही है। दोनों ही फारसी भाषा के शब्द हैं)। —*'जिज्ञासु'* ३. जिस पर अत्याचार हो। ४. निर्धनता। ५. पूरा करना। ६. कार्यान्वित करने योग्य। ७. शोक, दुःख। ८. मुक्ति दिलाओ। ९. अधम। १०. पञ्जाब में अहंकार को हंकार ही कहते हैं। ११. अनुचितरूप से बन्दी बनाना। १२. स्वल्प। १३. कर्मों का लेखा।

(३३)

राग=जौनपुरी, ताल=कैहरवा

क्यों सोच-विचार में बैठे हो, मन शुद्ध करो भाई इक छिन को।
लग चिन्ता की सब दूर करो, और त्यागो ध्यान विषय धन को।
परित्राण के प्रति सब व्याकुल हो, तुम आकुल हो प्रभु दर्शन को।
प्रभु-पूजा में अनुराग करो, औ' प्रस्तुत हो प्रभु कीर्तन को।
भक्ति और प्रेम के फूलों से, भरपूर करो हिय[1] कानन को।
एकान्त सुधारस पान करो, औ[2] शान्त करो अपने मन को।

卐

(३४)

राग=आसा, ताल=दादरा

यम नियम से मन शुद्ध करो, बाहर जल से अस्नान[3] करो।
परित्याग करो मल दूषण को, चित्त की वृत्तियाँ स्व-अधीन करो।
आसन, धारण, प्रत्याहार, संयम, अष्टांगी योग विचार करो।
प्राणायाम अनुसार आरम्भ करो, क्रमशः वश[4] प्राण-अपान करो।
सच्चिदानन्द रूप की प्राप्ति को, योगाभ्यास की रीति से ध्यान धरो।
मन जोड़ समाधि में मग्न रहो, विष छोड़ अमींरस पान करो।

卐

---

१. पुरानी भजन की पुस्तकों में हृदय छपा मिलता है। २. उर्दू में छपे संस्करणों में औ के स्थान पर और ही छपता रहा। औ फारसी लिपि में ओ पढ़ा जाता तो पञ्जाब के उर्दू पठित लोग इसका अर्थ 'अरे' लेते। औ ही सुन्दर व उपयुक्त है। श्री पं० चमूपतिजी व डॉ० भारतीयजी ने देवनागरी में औ करके ठीक ही किया है। *(सम्पादक)*
३. पञ्जाब में स्नान को अस्नान ही बोलते हैं जैसे उत्तरप्रदेश में स्कूल को इस्कूल कहा जाता है। ४. यह भक्तजी का प्रयोग है, यहाँ वश की बजाय भई या तुम शब्द का प्रयोग उपयुक्त है। वश की आवश्यकता ही नहीं। *(सम्पादक)*

(३५)

राग=भूपाली, ताल=कैहरवा

तू कुछ कर उपकार जगत में, तू कुछ कर उपकार
मानुष जन्म अमोलक तुझको, मिले न बारम्बार
कर्मोपासना ज्ञानकाण्ड को, कर्म अपकर्म विचार
जगत् में सुख दुःख प्राप्त होवे, सबको पूर्व कर्मानुसार
सुकृत अपना कर धन सञ्चय, यह वस्तु है सार
देशोन्नति कर पितृसेवा, गुणियों का सत्कार
शील सन्तोष[1] परस्वार्थ रति[2], दया क्षमा उर धार
भूखे को भोजन प्यासे को पानी, दीजे यथा अधिकार
कठिन समय में होवेंगे साथ, तेरे श्रेष्ठ आचार
ताँ ते[3] इनका कर तू संग्रह, सुख हो सर्व प्रकार
होवे अज्ञानी कहे ब्रह्म इसमें, तिसको है धिक्कार[4]
है कर्त्तव्य आवश्यक अमींचन्द, जो कहे खट चार[5]

卐

(३६)

रागिनी=असावरी, ताल=तीन

प्रभु को सिमर सिमर मन मेरे। पाप कटें सब तेरे॥
नाम दान अस्नान निरर्थक। जो मन प्रीत न तेरे॥
जातपात की बात न पूछे। पूछे काज भलेरे[6]॥
जिन करतार अकाल पछाता। सोई जगत् उचेरे[7]॥
दो दिन के सुख कारण मूर्ख। पावत उमर बखेड़े॥
गंग जमन काशी वन जंगल। हर घट में हर नेड़े[8]॥
पर जो उसको ढूँडत जावत। ऊजड़ फिरत अंधेरे॥
साँच त्याग मिथ्या जिन पकड़ी। अति उन दुःख सहेड़े॥
एक मात्र जो प्रभु को सिमरे। हम तिसके हैं चेरे॥

卐

---

१. प्रथम संग्रह में पञ्जावीरूप सन्तोख छपा है। २. परमार्थ प्रेम। ३. इसलिए। ४. अज्ञानी होते हुए अल्पज्ञ जीव स्वयं को सर्वज्ञ ब्रह्म समझे तो ऐसे को धिक्कार है। ५. छह शास्त्र और चार वेद। यह भजन मूल के अनुसार दिया है। ६. श्रेष्ठ कर्म। ७. वही जगत् में ऊँचा है। ८. निकट, यह पञ्जावी शब्द है।

(३७)

रागिनी=जोग, ताल=तीन

सुनो जगदीश विनती को तुम्हीं से आशा भारी है।
सुधारो अब कृपा करके दशा विगड़ी हमारी है॥
अविद्या देश में फैली हुआ मूर्ख यह भारतवर्ष।
विगाड़ा रीति नीति को परस्पर वैर जारी है॥
रहा न धन यहाँ पर कुछ न अब रहने की आशा है।
निरुद्यमता ने धर दावा हुआ भारत भिखारी है॥
हमारे देश के बनियो, महाजन, राजा और बाबू।
ज़रा इस ओर टुक देखो हमें आशा तुम्हारी है॥
नहीं है देश की ममता किसी भारत निवासी को।
करें क्या अब जतन यारो पड़ा दुःख सिर पै भारी है॥
नहीं है ऐसा कोई जन जो हमको आके धीरज दे।
यह क्यों रोते हो तुम साहिव नयनों से रक्त जारी है॥
वढ़ाओ देश भाषा को जहाँ तक हो सके तुमसे।
विना इसके वढ़ाने के बुरी हालत तुम्हारी है॥
सुनो शिक्षा हमारी तुम अगर मानो तो अच्छा है।
नहीं तो दिन बदिन सबकी अवश्य होनी ख्वारी[1] है॥
करो सब एकता दिल से कपट छल को ज़रा त्यागो।
मिलो तुम प्रेम से सज्जन यही विनती हमारी है॥

卐

---

१. तिरस्कार।

रागिनी=खट, ताल=तीन

अवगुण नहीं विचारो प्रभु, मेरे अवगुण नहीं विचारो
कोटानुकोटि पाप के मल से, अन्तःकरण है कारो
चोर कृतघ्न मैं नमक हरामी, जीव हिंसक हत्यारो
गर्वी[1], वेमुख, कूकर, सूकर, ईर्ष्या द्वेष भण्डारो
गँवार, लवार, कठोर, कुतर्की, परनिन्दा को प्यारो
दम्भी, कुटिल, कुकर्मी, लोभी, कामी क्रोधी भारो
वगला भक्त मैं जग का ठग हूँ जगत् को ठगने हारो
परोपकार का बाधक हूँ सदा स्वार्थ में मतवारो
अधर्म सभा का प्रथम सभासद, धर्म सभा से न्यारो
सभा समाज न जाऊँ न कदापि नींद आलस को मारो
नहिं सूझत अव मुक्ति की युक्ति जिससे हो छुटकारो
केवल है विश्वास का हेतु पावन नाम तुम्हारो
दया क्षमा की दृष्टि दयानिधे मेरी ओर निहारो
जैसे वने अव राखो 'अमीं' को वच जाय कारा गोरो

卐

टिप्पणी—भजन में मध्यकालीन भक्त कवियोंवाली ही भावना है कि 'प्रभुजी मोरे अवगुण चित्त न धरो।' परमेश्वर दयानिधि हैं तो न्यायकारी भी हैं। ईश्वर शुभ-अशुभ सब कर्मों का, सद्गुणों व अवगुणों का द्रष्टा है। कवि आत्मनिरीक्षण करके पश्चात्ताप कर रहा है। आत्मग्लानि का भाव इस भजन की प्रत्येक पंक्ति में पाया जाता है।

१. गर्व करनेवाला, अभिमानी।

(३६)

राग=विहाग, ताल=तीन

अवसर बीतो जात प्राणी तेरा अवसर बीतो जात
इस काल की हेराफेरी में तेरा अवसर बीतो जात
साठ मिनट गुज़रे, गया घण्टा चौबीस में दिन-रात
क्षण-क्षण करके क्षीण होत है, गई सन्ध्या आई प्रात
छः ऋतु मिलके वर्ष होत है, ऋतु ऋतु[1] में दो मास
मास मास में तीस दिनन हैं, इक आवत इक जात
बालकपन गया खेलकूद में, यौवन युवति साथ
वृद्ध भया कुछ बन नहीं आवत, काँपत सकले गात

(४०)

राग=असावरी, ताल=एक

मनुष्य का शरीर जैसे जेब की घड़ी है। चलती रहे तो वर्षों तक नहीं तो यह खड़ी है॥
हड्डियों के पुर्ज़े में रक्त लगाय तेल। त्वचा का चढ़ाए पर्दा चाम धर मढ़ी है।
नाड़ी-चक्र के समान प्राणों की कमानी जान। बीतत आयु दिवस रैन घण्टा औ' घड़ी है॥
माताजी के गर्भ माहीं बिन हथौड़े हाथ वाहीं। देखो कारीगर ने कैसे ढंग से घड़ी है॥

(४१)

रागिनी=पीलो, ताल=तीन

तुम्हें छोड़ किस द्वारे जाऊँ?
व्यथा हृदय की किसे सुनाऊँ?
हम अनजान अयाने[2] बालक।
तुम स्वामी रक्षक प्रतिपालक॥
आन पड़े हैं शरण तुम्हारी।
जन्म मरण का संकट भारी॥
विनय करें प्रतिदिन उठ प्रातः।
सुतवत् कंठ लगाओ ताता॥
तुम मंगलमय मंगलदाता।
तुम हो माता पिता औ' भ्राता॥
अर्थ चतुष्टय हमको दीजै।
दर-दर का नहिं भिक्षुक कीजै॥

---

१. मूल में 'रुत रुत' छपा मिलता है। २. अनजाने का पञ्जाबी रूप है।

राग=भैरव, ताल=रूपक

जप परमेश्वर का मधुर नाम
कलकल, पलपल, क्षणक्षण।
निशिदिन श्वास-श्वास से मधुर नाम॥
घट घट व्यापक अन्तर्यामी।
रोम रोम में रमता स्वामी।
निर्विकार निरवैर निरञ्जन।
पाप ताप नाशक दुःख भंजन।
जपते उसे सदा योगी जन।
पुनः पुनः कर उसे प्रणाम।
नित्य पवित्र सृष्टिकर्त्ता।
दुःख दारिद्रय मनोमल हर्ता।
अजर अमर अविनाशी अक्षर।
करुणा सिंधु अनन्त कृपाकर।
मंगलदायक शान्त सुधाकर।
भजले रे मन आठों याम॥
अन्न धान्य सब देने हारा।
भक्ति मुक्ति का है भण्डारा।
बुद्धि पाप-नाशक प्रभु दे नित।
'अमींचन्द'! प्रभु पूर्ण करे नित।
सकल मनोरथ सर्वकाम॥

卐

(४३)

रागिनी=आसा, ताल=धमार (पंजाबी भजन)

कीकन दाज रंगावाँ? सैयो नी मैं मूल न कतया॥
कीकन..........
नहीं साँ मैं भुक्खी, नहीं साँ मैं नंगी, पर नहीं चोली चुन्नी रंगी॥
हुन बैठी शर्मावाँ, सैयो नी मैं मूल न कतिया॥
पिछला कतिया कढ हण्डाया, अगे कतने नू हथ लगाया।
हुन बैठी पछताँवाँ, सैयो नी मैं मूल न कतिया॥
'अमींचन्द' बाह्मण लैन नू आया, रोवन लगा मेरा माँ पयो जाया।
कीकन सोहरे जाँवाँ, सैयो नी मैं मूल न कतिया॥
कन्त सुचज्ञा मैं हाँ कुचज्ञी, उसदे कजयाँ मैं जासाँ कज्ञी।
जे कन्ते मन भावाँ, सैयो नी मैं मूल न कतिया॥

(४४)

रागिनी=ललित, प्रातःकाल, ताल=तीन

क्षण क्षण आयु घटती जात। जीवन है कोई दिन की बात॥
तीस घड़ी में दिन बीतत है। तीस घड़ीभर रात॥
मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनिचर फिर फिर आवत सात॥
तिथि तारीख के चक्र में आकर तुरत महीना जात॥
गई है दीवाली, होली भी होली, बीत गई शिवरात॥
खट ऋतु बीते देर न लागत, वर्ष है बात की बात॥
काल कराल की चाल 'अमींचन्द', करे बिज़ली को मात॥

(४५)

राग=बहार, ताल=धमार

सखी वाहु संग खेलूँगी फाग, सखी वाहु संग खेलूँगी फाग॥
जिसकी फूली सकल फुलवाड़ी, बन उपवन उप बाग॥
जिस बहुरंगी की अद्भुत रचना, तिस से लगन रही लाग॥
देख खिलाड़ी के चरित मनोहर, मन उपजे अनुराग॥
जा के मन्दिर में जोति जगावत, चन्द्र-सूरज औ' आग॥
जिन के द्वार पै अप्सरा नाचत, गावत नारद राग॥
जिनका बजे नित्य अनहद बाजा, महाराजन को राज॥
ऐसे 'अमीर' से खेले जो होरी, सो तिरया बड़ भाग॥

(४६)

राग=केदार, ताल=एक

जिस समय वह न्यायकारी, न्याय-द्वार खोलेगा ॥
पाप पुण्य दोनों (ही)[१] तेरे धर तुला पै तोलेगा ॥
मत भरोसा रख किसी पै छूटूँगा उसके तुफैल[२] ॥
गुनाहगार छोड़ दीजे कौन उनको बोलेगा ॥
या हो बेटा, या हो पोता, या कहे कि मैं हूँ हबीब[३] ॥
कौन कहे सिफारशी हूँ, मुलज़मों के टोले का ॥
छूटे न पापी कदापि, क्यों न हो कितना 'अमीर' ॥
जो रुलायगा किसी को अन्त वह भी रो लेगा ॥

卐

(४७)

रागिनी=जोग, ताल=धमार

करो आज से तुम सफर की त्यारी। यह पैंडा[४] कठिन है यह मनज़िल है भारी ॥
जीवन को समझो चमत्कार बिजली। है वास्तव में अत्यल्प आयु तुम्हारी ॥
बर्खा ऋतु की ज्यूँ परदार च्यूँटी। मुहूर्त में अवधि बताती हैं सारी ॥
महाकाल विकराल पीछे पड़ा है। न जाने अचानक ही आ जाए बारी ॥
फिरे काल का चक्र इंजन के सदृश। काटे उमर कालचक्रों की आरी ॥
जतन करते हारे चिकित्सक ही सारे। जिन्होंने सदा धातु जड़ बूटी मारी ॥
हकीमों की हिकमत न कुछ काम आवे। बनाता गया है दवाई पसारी[५] ॥
शस्त्रों के बल बल्कि सेना के दल से। बचेगा नहीं काल से प्राणधारी ॥
कभी होती धन द्वारा धनियों की रक्षा। न मरता कदाचित कोई मायाधारी ॥
दिनरात उत्पात[६] करता है घातक। लिये हाथ में बर्छी यमधर कटारी ॥
न छोड़ेगा जीता कदाचित् किसी को। नियम है नियन्ता का यह आज्ञाकारी ॥
आगमन गमन[७] से बचा वही अमींचन्द। लगी है लगन जिसको ईश्वर की प्यारी ॥

---

१. यह शब्द हमने बढ़ाया है। २. द्वारा। ३. मित्र, प्रेमी। ४. पञ्जाबी शब्द है, यात्रा के अर्थ में। ५. पंसारी। ६. डॉ० श्री भारतीय द्वारा सम्पादित संस्करण में उत्पत्ति छप गया है। यह अशुद्ध है। हमने भक्तजी के जीवनकाल में छपे संग्रह के आधार पर उत्पात किया है। इसका भाव है दङ्गा, लड़ाई। ७. पुराने संस्करणों में यही शब्द है। बाद में सम्पादकों ने आवागमन कर दिया।

(४८)

रागिनी=शुद्ध टोडी, ताल=तीन, (उर्दू भजन)

करके ख़म[१] गर्दन रहो हक[२] के हज़ूर। सरकशी[३] कर दूर और किवरो गरूर[४]॥
दिल में कर रोशन महब्बत का चराग। ताकि हो ज़ाहिर तेरे चहरे पै नूर॥
रिज़क[५] पाते हैं उसी रिज़्ज़ाक[६] से। मोरो मार और सभी वहशो त्यूर[७]॥
माँगता है अपनी हाजत[८] गैर से। देख क्या करता है तू ऐ! वेशऊर[९]॥
नोशकर जामे महबत ऐ 'अमीर'[१०]। कर शरावे इश्क से हासिल सरूर[११]॥

卐

(४६)

राग=विहाग, ताल=तीन

यह मन कव समझेगा वावरा। कव समझेगा वावरा वावरा
मन कव समझेगा वावरा॥
अमृतसागर को तज मूर्ख। पीवत है जल कौड़ा[१२]॥
विषय आनन्द की मृगतृष्णा में। फिरत इते उत दौड़ा॥
व्यभिचारी मति मानत नहीं। खावत है विष मौहरा[१३]॥
अकार उकार मकार फूल की। रस ले तू बन भौंरा॥
यह मिथ्या घर सांचा जानत। भूल गया निज ठौरा॥
'अमींचन्द' वे ढव मानत नहीं। मुग्ध[१४] गँवार निगौड़ा॥

卐

---

१. झुका। २. प्रभु चरणों में। ३. विद्रोह। ४. अभिमान। ५. अन्न। ६. अन्नदाता, पालक। ७. च्यूँटी, सर्प, पशु, पक्षी सभी का वही पालक है। ८. आवश्यकता। ६. मूर्ख। १०. हे अमीर! प्रभु प्रेम का रस पानकर। ११. भक्तिरस से आनन्द की प्राप्ति कर। १२. कड़वा। १३. पञ्जाव में भयङ्कर विष को कहते हैं। १४. सर्वथा मूढ़।

रागिनी=पहाड़ी, ताल=धमार, (पंजाबी भजन)

वतन दुराडा साडा देस दुराडा, पैयाँ मैं लमड़े राहीं
साईं! सानूँ तोड़ पहुँचाईं।
टुरी हाँ कु-वेले, विच उजड़े बेले, साथ नहिं बेली बाहीं,
साईं! साडा साथ निभाईं।
पैर अगेरे मैं डरदी न धरदी, सप्प बूटे बूटे काहीं
साईं! करीं दूर वलाईं।
झलाँ विच्च झलियाँ, मैं दभ सूलाँ सलियाँ, हो गये पैर अजाईं
साईं! किथे पैर टिकाईं।
थक थक हारी, सिर ते भार है भारी, पई मैं अवलड़े राहीं
साईं! सानूँ राह वतलाईं।
खुबियाँ मैं खुबियाँ, चक्कड़ विच डुबियाँ, फसियाँ मैं आन कुथाईं,
साईं! जावाँ मैं किस थाईं।
रात अन्धेरी, लभदा तुला न बेड़ी, नदियाँ वगन असगाईं,
साईं! सानू पार लगाईं।
खाली मेरा पल्ला हथीं छाप न छल्ला, महसूलिए मंगदे मलाहीं,
साईं! साडा पलड़ा छुड़ाईं।
बुरी हाँ या भली हाँ, मैं दर उत्ते खली हाँ, आन ढठी हाँ पनाहीं,
साईं! नित्य दा पैंडा मुकाईं।
'अमीर' तेरा दर मंगदे न संगदे, मेरी भी आस पुजाईं,
साईं! सानूँ वतन पहुँचाईं।

卐

(५१)

शरण पड़ा हूँ तेरी दयामय

जगत् सुखों में फँसकर स्वामी, तुझसे लिया चित्त फेरी
पाप-ताप ने दग्ध किया मन, दुर्मति ने लिया घेरी
बहा जात हूँ भव-सागर में, पकड़ लियो भुज मेरी
अनेक कुकर्म गिनो मत मेरे, क्षमा दृष्टि दो फेरी
फेरो ज्ञान मधुर मुख अपना, करो प्रकाश इक बेरी
पाप मलीन हृदय में मेरे, ज्योति प्रकाशे तेरी
प्रेम तरंग उठे मम अन्तर, दीन विनय सुनो मेरी

卐

(५२)

रागिनी=शुद्ध तोंड़ी, ताल=तीन (काफ़ी पञ्जाबी में)

मैं जिंद जान तुसाँ थीं घोली, सैयो बावल जाइयो नी भरजाइयो।
रख लौ अज कोई डोली॥
कई वा दे वग्गे वरोले, साँभ न सकियाँ मैं गुडियाँ पटोले।
खेडन थीं अजे चा नहीं लथड़ा, पिया वछोड़ा भोली॥
जांजियाँ कीते तुरत तयारे, पा टल्लियाँ गल ऊठ सिंगारे।
सुन सुन कूच दे ढोल नगारे, होई आँ डावाँ डोली॥
पैर डोली विच मूल न धरसाँ, सैयो तुसाँ थीं विछड़ी मरसाँ।
दम दम याद तुसाँ नूँ करसाँ, किधर गई मेरी टोली॥
डोली पकड़ बिठाई भाइयाँ, मिलन न दितियाँ चाचियाँ ताइयाँ।
अम्बड़ी नाल में विदा[1] न होई, बावल नाल न बोली॥
डोली चाई चहूँ कहाराँ, रोवाँ कूकाँ हाईं माराँ।
मथयों धड़ी संधूर उताराँ, गलथी लाहवाँ मौली॥
गुत्थयाँ लुटियाँ शहर गराइयाँ, 'अमींचन्द' वाह्मणाँ लागियाँ नाइयाँ।
सब सखतियाँ सिर मेरे आइयाँ, की जानाँ मैं भोली॥
रख लो अज कोई डोली॥

卐

---

१. पुराने संस्करणों में 'विद्दया' शब्द छपा मिलता है।

(५३)

राग=रामकली

अरे अन्धे मूरख तू है कैसा सोया।
अमोलक समय तैंने सोकर है खोया॥
न सोकर तू जागा न करवट है बदली।
न दर्पण ही देखा न मुखड़ा ही धोया॥
गर्भाशय का न समझा तू आशय।
कि किन-किन कुकर्मों का यह दण्ड होया॥
पहना था' जामा तू मानुष-जनम का।
कुकुर्मों के कीचड़ में तूने डुबोया॥
भूषण की शोभा को जाने क्या मर्कट।
गले में तिरे कैसे माणक पिरोया॥
अमींचन्द बालक जन्मा था रोता।
चलते समय भी यही रोना रोया॥

(५४)

राग=शंवारा, ताल=झप

अन्तःकरण की करो तुम सफ़ाई। कीजे इसे साफ़ दर्पण की न्याईं॥
वर्षों से वुद्धि की चिमनी है मैली।
लगी इसमें पापों के धूएँ की स्याही।
मन्दिर के अन्दर हुआ है अन्धेरा, अतएव देता नहीं वह दिखाई॥
वह है पास पर नज़र आता नहीं है।
वेदों में मिलती है उसकी गवाही॥

(५५)

राग=बिलावल ध्रुपद आड़ह, ताल=तीन

आरत की रक्षा करो, कष्ट और क्लेश हरो।
तेरी एक टेक मोको, तेरा ही सहारा है॥
हमरी है दशा हीन, हीनन से हीन दीन।
भारत निवासियों ने रो रो यह पुकारा है॥
विनय कर जोड़ हाथ, सुनिये दीनन के नाथ।
तू ह्मी परममित्र मेरो, तू ही रखवारा है॥
अमींचन्द वारवार करत है नमस्कार।
कीजिए, स्वीकार यह तो दास ही तुम्हारा है॥

(५६)

रांग=भैरवी, ताल=गीत

क्यों पड़ी है स्वप्न में भई भोर निद्रा त्याग री।
सास-ननदें देत निहोरे जाग री तू जाग री॥
हे पतित! हे अधम बुद्धि! सो गई आलस भरी।
शान्ति-शान्ति शव्द कहकर चरण पति के लाग री॥
स्नान कर उठ धार अम्बर कर सिंगार लगा सुगंध।
प्रभु रीझे जिस भाँति से उस भाँति कर अनुराग री॥
कर सफल यौवन, न खो दुर्लभ समय आलस्य में।
पश्चात्ताप रहे न 'अमींचन्द' चार दिन का फाग री॥

卐

(५७)

रागिनी=कोशिया कान्हड़ा

कैसे अमूरत की मूर्ति बनावें। सर्वदेशी को एक देशी ठहरावें॥
आवाहन करें तो कहाँ से बुलायें। विसर्जन करें तो कहाँ को पठायें॥
आसन सिंहासन पै तकिये लगायें। निराधार को किसके आश्रय बिठायें॥
अप्राणी को प्राण-प्रतिष्ठा करायें। जड़ वस्तु को कैसे चेतन बनावें॥
पाद्यार्घ, आचमन किसको करायें। सदा शुद्ध निर्मल को किसमें निह्लावें॥
धूप और गंधादि क्योंकर सुँघायें। निर्लेप को लेप कैसे लगायें॥
ज्योति को दीपक की ज्योति दिखायें। सूरज को जुगनू का चाँदन बतावें॥
नैवेद्य के पीछे शुद्ध जल चढ़ायें। क्षुधा को मिटाकर तृषा को बुझायें॥
पान और सुपारी इलायची मिलायें। यह क्या उनके होठों की रंगत बढ़ायें॥
धनधान्य जिसका है सर्वस्व जिसका। टका दक्षिणा देके बदला चुकायें॥
प्रदक्षिणा में जिसका नहीं अन्त पायें। फिरें गिर्द उसके क्यों चक्र खायें॥
जाग्रत स्वप्न और सुषुप्ति से न्यारा। किसको सुलायें व किसको जगायें॥
अजन्मा को जो आज जन्मा बतायें। अमींचन्द क्यों उनके धोखे में आयें॥

卐

(५८)

रागिनी=मधमात सारंग, ताल=तीन

मैं उनके दरस की प्यासी। नी मैं उनके दरस की प्यासी।
जिनका ऋषि-मुनि ध्यान धरत हैं, योगी योगाभ्यासी॥
जिनको कहत हैं अजर अशोकी, आश्रय जिनके हैं त्रिलोकी।
न वह जन्मे न वह मरे, अकाल पुरुष अविनाशी॥
अभेद अछेद अव्रणी है, अक्षर और अनादि॥
अचल अमूर्त और अनूपम, परिभू, सर्वनिवासी॥
अतुल बल जाको अटलराज है, सृष्टि सकल है दासी।
अमींचन्द जिनसे होत प्रकाशित रवि शशि अग्नि प्रकाशी॥

卐

(५९)

रागिनी=जै जैवन्ती

नमो सृष्टिकर्त्ता नमस्ते नियन्ता। नमो कष्टहर्त्ता नमस्ते अघनाशी॥
नमो दुःख भंजन, नमस्ते निरञ्जन। नमो सच्चिदानन्द निर्मल प्रकाशी॥
अमींचन्द का गांन स्वीकार कीजे। करे प्रार्थना आर्य[1] भारत निवासी॥
अविद्या करो नष्ट सारे[2] जगत् की। न कीजे विलम्ब अब कटे भरमफाँसी॥

卐

(६०)

नमो जगत् कर्तरे, नमो विश्व भर्तरे, दयामय दयालु दीनन नाथ स्वामी॥
नमो दीनबन्धु, नमो करुणासिंधु, नमो सर्वव्यापक, नमो अन्तर्यामी॥
नमो प्रीति साधक, नमो नीतिवर्द्धक, नमो सुखदायक, नमो अग्रगामी॥
नमो विपदं भंजन, नमो पाप गंजन, नमो मोक्षदायक, आनन्द घन नमामी॥

卐

---

१. बाद में सम्पादकों ने आर्य की बजाए 'दीन' शब्द रक्खा, छन्द की दृष्टि से अधिक उपयुक्त है। २. पुराने संस्करणों में यहाँ 'आर्यवर्त' छपा मिलता है। 'सारे जगत्' अधिक ठीक है।

रागिनी=बागेश्वरी, ताल=झप

अगर देश-हितैषी हमें न जगाता।
तो देशोन्नति का किसे ध्यान आता॥
अविद्या की निद्रा में सोता था भारत।
परोपकारी फिरता था घर-घर जगाता॥
तपस्वी प्रतापी वह भारत का भानु।
न होता प्रकट कैसे अंधेर जाता॥
होते किरानी कुरानी बहुत-से।
यदि वेद-रीति पुनः न चलाता॥
गऊ की विपद देख विधवा का दुखड़ा।
कहता था हा देव! हा! हा! विधाता॥
प्रतिष्ठित न होती कभी मातृभाषा।
जो संस्कृत की फिर से रुचि न बढ़ाता॥
महा कठिन था वेद का भाष्य करना।
अहो उनकी बुद्धि, अहो उनकी ज्ञाता॥
किसका था सामर्थ्य किसकी थी शक्ति।
जो ऐसे समय में समाजें बनाता॥
आज्ञा थी उनको सर्वशक्तिमन् की।
वह अतएव आया था भस्मी रमाता॥
स्वदेश और स्वजाति की थी किसको भक्ति।
छठी संख्या का जो नियम न लिखाता॥
हवन में न पड़ती सुगंधित सामग्री।
तो वायु यह कैसे सुगंधि उड़ाता॥
इकट्ठे न होते जो विद्वान् इतने।
हमें घर में आ कौन लैक्चर सुनाता॥
भला कैसे होती यह फूलों की वर्षा।
कहो कैसे आती इस उत्सव की प्रातः॥
परिव्राजकाचार्य स्वामी दयानन्द।
पधारा है परलोक डंके बजाता॥
'अमींरस' न पीता कवीशर[1] कदाचित।
न सत्संग करता न हर गुण को गाता॥
शुभागमन हो उत्तम समय है महाशय।
नमस्ते नमस्ते करें आर्य भ्राता॥

---

१. पञ्जाबी में कवि को कवीशर भी कहते हैं।

(६२)

राग=भैरवी, ताल=तीन

आर्यभूमि में सामाजिक कल्पवृक्ष लगा गये।
उचित वक्ता, सत्यवादी, सद्धर्म बतला गये॥
हो गये थे लोप चारों वेद ही इस देश से।
करके देशाटन महाशय उनको फिर फैला गये॥
देशहितैषी वह महर्षि दयानन्द सरस्वती।
अपने शुभ उद्योग से वह मोक्ष पद को पा गये॥
न्याय युक्ति है टपकती उनके सत्य सत्यार्थ से।
भूल न जाइयो कदापि जो तुम्हें समझा गये॥
आज जो उत्सव हुआ यह उनका ही उपकार है।
दूर-दूर से आर्यगण मिल इस नगर[1] में आ गये॥
सैकड़ों विद्वान् कविजन उनकी महिमा[2] लिख चुके।
तुझसे गायक कितने 'अमींचन्द' श्रेष्ठ भजन सुना गये॥

(६३)

रागिनी=जोगिया, ताल=शूल

(महर्षि दयानन्दजी महाराज के शुभ आगमन पर भावभरित हृदय से रचा गया गीत)

उपज्यो दण्डी, छिपे पाखण्डी, डरे हैं घमण्डी—धूर्त अन्यायी॥
विद्या पाकर निकला दिवाकर, तिमिर हटाकर, ज्योति दिखाई॥
आये हैं स्वामी दयानन्द नामी, गरजे सभा में सिंह की न्याईं॥
सत्य का मण्डन, दम्भ का खण्डन कर, पाँव तले की धूल उड़ाई॥
डरे हैं प्रमादी, अनीश्वरवादी, पौराणिक दें रामदुहाई॥
बड़े-बड़े नास्तिक, होकर आस्तिक, हाथ जोड़ आये शरणाई॥
कर शास्त्रार्थ, रच सत्यार्थ, सत्योपदेशों की धूम मचाई॥
लोक-लोकान्तर, मत-मतान्तर, कर न सका कोई उनसे लड़ाई॥
देश-देशान्तर, द्वीप-द्वीपान्तर मान चुके उनकी पंडिताई॥
वेदों के बल से, युक्ति प्रबल से, कलियुग की काया पलटाई॥
तप अखण्ड से तेज प्रचण्ड से, रिपुओं की छतियाँ धड़काई॥
योगी[3] महर्षि आत्मदर्शी, दिग्विजय जिनके भाग[4] में आई॥
अमींचन्द ऐसा होना कठिन है, धर्मावलम्वी वेदानुयायी॥
कष्ट उठाये नहीं घबराये, धर्म न हारा यदि विष खाई॥

---

१. शिमलावाली पुस्तक में 'पुरी' शब्द छपा है। २. पुराने संस्करणों में यहाँ अस्तुत (स्तुति) छपा है। हमने महिमा कर दिया है। यह शब्द अधिक उपयुक्त है। ३. पुराने संस्करणों में योगेन्द्र शब्द है। ४. पुराने संस्करण में यहाँ 'हिस्से' शब्द है।

(६४)

रागिनी=गांधारी, ताल=तीन

उदय भयो भारत भानु भारत में उदय भयो है भान।
छिप गया तिमिर धरत के नीचे नष्ट भयो अज्ञान॥
नगर नगर और ग्राम ग्राम में घर घर सभा समाज।
घोर निद्रा से जाग उठे प्रिय भ्रातृगण विद्वान्॥
यवन देश गई यावनी भाषा मातृभाषा की लागी आशा।
अब सत्कार करेगी मेरा यह आर्य सन्तान॥
देशभक्त और देश-हितैषी रसिक पुरुष मतिमान्।
देशोन्नति पर मधुर मनोहर देते हैं व्याख्यान॥
स्त्री शिक्षा फिर होवन लागी, भारत भूमि तू बड़भागी।
विधवाएँ फिर मानित होती, पा आदर सन्मान॥
शिल्प विद्या भली भाँति विचारो, ले उपदेश हृदय में धारो।
कला कौशल आदि रचो, नभ-यात्रा के यान॥
पढ़ो वेद उपवेद सभी तुम जिससे नाशे सकल अविद्या।
साँच झूठ का निर्णय करलो छोड़ दम्भ अभिमान॥
धार्मिक शील सुशिक्षित पण्डित अमींचन्द चतुर सुजान।
मिथ्या त्याग करें सत् भाषण, छोड़ लाभ और हान॥

卐

राग=बढ़हंस, ताल=तीन

दुर्दशा देखके भारत भू[1] की, दयामय को दया आई।
महर्षि जी[2] को उत्पन्न करके, दीनी उन्हें प्रभुताई॥
वैदिक-पूर्ण पंडिताई..........
विद्या के सागर परम उजागर, तुमरे निमित्त इत आये।
परिश्रम करके उपदेश दीना, जिम्मे थी सब देश भलाई॥
सनातन नीति सिखाई..........
सर्वसुशिक्षित वनकर भिक्षुक, गृह गृह माँगन आये।
ऋषि के समर्पण ईश्वर अर्पण, भिक्षा दयो हमें भाई॥
जो तुमसे सर बन आई[3]..........
विद्या से हीन हुए हैं पराधीन, जो जो कुलीन कहाएँ।
वैर विरोध परस्पर करके, त्याग दीनी एकताई॥
अविद्या घर-घर छाई..........
उदार हृदय औ' बड़े-बड़े दानी, भारत खण्ड निवासी।
तन मन धन न्यौछावर करके, होंगे इसके सहाई॥
है इसमें इनकी बड़ाई..........
धार्मिक, शील, सुशिक्षित पण्डित, होगी सन्तान तुम्हारी।
ऋषि का स्मारक चिह्न बनेगा, वेदों की होगी पढ़ाई॥
परम्परा जो चली आई..........
लाखों मन्दिर देश के अन्दर, धनी पुरुषों ने वनाये।
महाविद्यालय वेद की शाला, अब तक किसी ने न बनाई॥
रही हमें सुध न काई..........
जो विद्यालय नियत करेगा, राजा महाराजा अधिराज।
अमींचन्द विक्रम भोज-सी कीर्ति, होगी उसकी सिवाई॥
कहे सव लोक लोकाई..........

विशेष टिप्पणी—यह भजन कविजी ने उस समय रचा था जव वे मुनिवर पं० गुरुदत्तजी के सङ्ग डी० ए० वी० कॉलेज की स्थापना के लिए आर्यसमाजों में धन-संग्रह के लिए भिक्षा की झोली पसारते थे। तव आर्यजनता को यह विश्वास दिलाया गया कि यह वेदविद्यालय होगा। यहाँ से धार्मिक, सुशील, सुशिक्षित पण्डित निकलेंगे। अव तो इनके अधिकांश प्रिंसिपल मेरी निजी ठोस जानकारी के अनुसार

---

१. पुराने संस्करणों में 'भूमि' शव्द है। हमने भू कर किया है। २. मूल में ' एक महर्षि' छपा है। 'महर्षिजी हमने किया है। ३. यह वाक्य पञ्जाव में दान माँगते हुए कहा जाता है। भाव यह है—अपने सामर्थ्य के अनुसार जो दे सकते हो, दो।

शराबी व कबाबी हैं। धार्मिक जनता ईश्वर, वेद व ऋषि के नाम पर ठगी गई। आर्यसमाज पर जब-जब सङ्कट आया डी० ए० वी० कॉलेज कमेटी का एक भी अधिकारी किसी आन्दोलन में जेल न गया। एक भी प्रिंसिपल आज तक धर्म या देश के लिए जेल न गया। एक प्रिंसिपल भगवानदास ही शूरवीर निकले। वही एक अपवाद हैं। डी० ए० वी० संस्थाएँ आर्यसमाज को एक भी शहीद न दे सकीं। लाला लाजपतरायजी ने तभी तो लिखा है कि इनके सञ्चालकों, मालिकों का परमधर्म वेद नहीं है, स्कूल-कॉलेज इनका परमधर्म है। इतिहास का यह कटु सत्य लोगों के सामने आना ही चाहिए तभी तो मैंने यह टिप्पणी यहाँ दी है। डी० ए० वी० आन्दोलन आर्यसमाज ने किन-किन आशाओं के साथ चलाया था यह कुछ अगले गीतों से भी पता चलेगा। ऐसे गीतों के कुछ ही पद यहाँ देते हैं।'

(६६)

वैदिक कॉलेज की आवश्यकता

वैदिक विद्या के विन कितनी है हानि। भारत की सन्तान हुई है अज्ञानी॥
रहा न भ्रातृभाव परस्पर की प्रीति। आपस की पड़ी फूट बने दुश्मन जानी॥
रही न देश में कुछ भी वेदों की चर्चा। रही न मधुर मनोहर मनोरञ्जन वाणी॥
हाय शोक! हाय कष्ट! होती हैरानी त्याग वेद की रीति चलाई मनमानी॥
संस्कृत के कालेज वन गये जर्मन में। शर्म की यंह तमसील[1] थी तुम को दिखलानी॥

(६७)

एक अन्य गीत में लिखा था—
कहाँ है पातञ्जलि ऋषि वह तुम्हारा? योग औ' महाभाष जिसका प्रधान है॥
कहाँ जैमिनीजी मीमांसा के कर्त्ता? धर्मों का तुम को सुनाए विधान है॥
विद्या से धर्म, धर्म से अभयपद। विद्या से मिलता परम ब्रह्मज्ञान है॥

(६८)

एक अन्य गीत मे लिखा था—
सारे ही मशकूर[2] होंगे देश के विद्यार्थी। वेद चारों और इंगलिश पढ़के होंगे शाद[3] हम॥
जो न करता देश में उपदेश वेदों का ऋषि। कर चुके थे धर्म धन के मान को बदनाम हम॥
पर ज़रूरी है हमें कालेज बनाना ऐ 'अमीर'। मिट न जाए नाम उनका जिनकी हम औलाद हैं॥

---

१. उदाहरण। २. कृतज्ञ, आभारी। ३. प्रसन्न।

स्त्री शिक्षा के बहुत लम्बे गीत के कुछ पद्य

पहले तो सब स्त्री विद्यावती थीं। जैसे महारानी लीलावती थीं॥
अब सारी अनपढ़ हैं भारत की नारी। अतएव बिगड़ी दशा है हमारी॥
पड़ता है इसके गले काम भारी। सुनाऊँगा आगे सुनो बारी-बारी॥
बच्चों में होती है जबकि लड़ाई। करे फैसले उनके घर बीच माई॥
बाहर से कोई वस्तु जब घर में आवे। हिस्से के अनुसार सबको दिलावे॥
न हिस्सा घटाए न हिस्सा बढ़ाए। दोनों का इसमें ही पूरा पटाए॥
पिता पुत्र में जबकि होती है अनबन। मनाने में उनको लगाती है तन-मन॥
कम खर्च करने के सोचे है चालें। रुपया बढ़ाने के कई ढंग निकाले॥
नहीं घटने देती खज़ाने से तिलभर। मानो है घर की फाईनानशल कमिशनर॥
गोदामों में देखो रसद सब भरा है। घी दाल चावल आटा खरा है॥
वस्त्रों की ऐसी बनाती है वरदी। मिटा देती है जिसमें गर्मी औ' सर्दी॥
अमारत का घर बैठे नकशा बनाए। पतिदेव को लेके मौका दिखावे॥
यहाँ फूलों के बेल बूटे लगाए। पक्की अमारत हो आँगन कुशादा[1]॥
बच्चे को कहती है दूँगी मिठाई। अगर तूने पी ली यह कड़वी दवाई॥
करे फोड़े-फुंसी की ऐसी दवाई। बिना मरहम पट्टी के झट हो सफाई॥
माता अध्यापक है माता आचार्य। माता बनाती है सन्तान आर्य॥
माता अशिक्षित का बेटा कुशिक्षित। माता सुशिक्षित का बेटा सुशिक्षित॥
नहीं तुल्य इसके कोई कर्मचारी। नहीं तुल्य इसके कोई आज्ञाकारी॥
सन्तान अपनी सुधारी जो चाहो। तो सारे ही तुम अपनी पुत्री पढ़ाओ।
कन्या को जब तुम पढ़ाओगे विद्या। चली जाएगी तब यहाँ से अविद्या॥

卐

---

१. खुला हुआ।

(७०)

फूट के फल से बचने का उपदेश★

तू खा इसे मत, यह सरासर[१] है छल। ना-इत्तफ़ाक का बीज है फूट फल॥
तनज़्ज़ुल[२] के बूटे का है यह समर[३]। जो देखो इसको ज़रा गौर कर॥
वैसे तो है यह बड़ा खुशनमा[४]। परन्तु नतीजा है इसका बुरा॥
हज़ारों के इसने उजाड़े हैं घर। लाखों के इसने कटाए हैं सर॥
लज़्ज़त[५] में हैं इसके बुग्ज़ो[६] अनाद[७]। समझो इसे ठीक मव्दाए फ़साद★★॥
इसी पुरजफ़ा[८] ने किया है सितम[९]। कि बन को गये राम लछमन वहम[१०]॥
मिला राम से फूट, रावण का भाई। इसी फूट ने सारी लंका जलाई॥
कौरव पांडवों को इसी ने लड़ाया। भारत को ग़ारत इसी ने कराया॥
आकाश से उसने हमको गिराया। ज़मीं को उलटकर रसातल दिखाया॥
गज़नी से महमूद उसने बुलाया। यही हिन्द में गैर कौमों को लाया॥
इसी की बदौलत तो इदबार[११] आया। यह बायस[१२] बुलन्दी से पस्ती[१३] में लाया॥
इसी ने किया सिखों का खातमा। मेरी तोबा तोबा ऐ परमात्मा॥
वो आपस में कटके लड़े शूरवीर। जो करते थे दुशमन को दम में असीर[१४]॥
मत और मतान्तर किये इसने जारी। मज़ाहव में डाली उसी ने है ख्वारी[१५]॥
हिन्दू मुसलमाँ इसी ने लड़ाए। मस्जिद औ मन्दिर इसी ने तुड़ाए॥
गीत उसका गाकर सुना तू 'अमीर'। नतीजा निकालें सभासद अखीर॥

(७१)

राग=मेघ, ताल=झप

ब्रह्मचर्य आश्रम में रहकर जितेन्द्रिय, परा-अपरा विद्या पढ़े ब्रह्मचारी।
चौबीस वर्ष अथवा छत्तीस के पश्चात्, बने फिर गृहस्थी विवाहे कुँवारी।
ज्यों त्यों उपार्जन कर ले धर्म धन को, जिससे बने, धर्म-धुन, मायाधारी।
जो जो उचित कर्म करता रहे नित्य, सायं प्रातः करे भजन भारी।
सन्तान अपनी बनाकर सुशिक्षित, बने वानप्रस्थी रहे सत्यधारी।
बन में बसे अथवा पुर व नगर में, आने न दे पास व्रत विघ्नकारी।
अन्न न मिले तो यह फल-फूल खाए, फल न मिले तो रहे शाकाहारी।
अन्तिम अवस्था में संन्यासी होकर, परोपकार में होम दे आयु सारी।
'अमींचन्द' ऐसो न होवे संन्यासी, जैसे ये फिरते हैं बहुरूप धारी।

★ यह भजन आर्यसमाज शिमला द्वारा 'भजनविलास पुस्तक सन् १८६१ में प्रकाशित मिलता है। ★★ झगड़ा पैदा करने का स्थान। १. सर्वथा। २. पतन। ३. फल। ४. आकर्षक। ५. स्वाद। ६. द्वेष। ७. शत्रुता। ८. अन्यायी, क्रूर। ९. अत्याचार। १०. परस्पर मिलकर। ११. पतन। १२. कारण। १३. गिरावट। १४. बन्दी बनाते थे। १५. झगड़ा।

(७२)

रागिनी=भैरवी, ताल=तीन

मोरी नैय्या किस विध उतरे पार। किस विध उतरे पार॥
वार-पार कोउ घाट न सूझत। आन पड़ी मंझधार॥
बिजली चमके बादल गरजे। उलटी चलत बयार॥
गहरी नदिया नाव पुरानी। नावक है मतवार॥
द्रुपद सुतावत् सुनत न कोई। हमरी कूक पुकार॥
तीक्षण जलधारा दुस्तर है। उठत तरंग अपार॥
जिस भुजबल से जगत् सहारयो[1]। सोई हाथ पसार॥
'अमींचन्द' की राखो नावरिया। पड़त भँवर मंझधार॥

(७३)

रागिनी=सोहनी, ताल=तीन

त्राहि त्राहि रखले करुणाकर जी, त्राहि त्राहि रखले॥
सुत दारा मित सुख के साथी, भागें विपत पड़े॥
भिक्षा माँगू केवल तुमसे, जो कीजो न दर दर के॥
माला, लक्कड़, ठाकुर पत्थर, कौन सहाय करे॥
कष्ट क्लेश न व्यापे तिस तन, जो जो तुझको सिमरे॥
दास जान के कीजे पालन, हम हैं भले या बुरे॥
आचारादि न देखो मेरे, गुण अवगुण से भरे॥
दो कर जोड़ अमीं की विनती। चरण शरण निज दे॥

(७४)

राग=मालकौंस ताल=

मन हुआ ज्ञान इन्द्रिय के वश में, ज्ञान इन्द्रिय विषयन के वश में।
लम्पट कान हुए कनरस में, नेत्र फँसे रंग-रूप के रस में।
घ्राणेन्द्रिय बंध गया गंध में, त्वचा रही है कोमल घस में।
भाँति भाँति के भोग लालसी, रसना उलझ रही षट् रस में।

---

१. शिमला से प्रकाशित 'भजन विलास' में यही पाठ है। लाहौर से प्रकाशित पुष्पावली में 'जगत् सहारयो' के स्थान पर 'सृष्टी कीनी' छपा है।

(७५)

रागिनी=धनाश्री, ताल=तीन

कौन धराये धीर, हे जगदीश्वरजी कौन धराये धीर ॥
लाख चौरासी घूमत घूमत जीवड़ा[१] भयो अधीर ॥
हूँ अति कुटिल महा खल कामी अवगुण भरो है शरीर ॥
तव यश गावत गावत उभरे तुलसी, सूर, कबीर ॥
इसी हेतु से नाम रटत है तुमरो दास 'अमीर' ॥

(७६)

राग=भैरवी, ताल=तीन

जिस गाड़ी में जाना तुझको, इक पल छिन में आती है।
कुछ देर नहीं बाँधो बिस्तर, घंटी उपदेश सुनाती है ॥
करे शंट अरु इञ्जन गरजे है, सुन सुन जिया थरथर लरज़े[२] है ॥
कर तरक[३] वतन उस देश चले, जिससे नहीं आती पाती है ॥
इक उतरी आन सवारी है, इक चलने की कर रही त्यारी है ॥
दुनिया इक अजव स्टेशन है, जहाँ रेल चले दिन राति है ॥
जिसे जिस दर्जे में जाना है, वैसा महसूल चुकाना है ॥
यहाँ टिकट ही देखे ज़ाते हैं, नहीं पूछते कौन-सी जाति है ॥
यहाँ घूमते चोर उचके हैं, जो दाव घात के पक्के हैं ॥
कोई गाँठ कतर ले-जाता है, कोई करता आत्मघाती है ॥
जव होती रेल रवाना है, तव छूटत खेश[४] बेगाना है ॥
रो-रोके पीछे देखे है, गाड़ी से पाकर झाती[५] है ॥
जो ताज तखत का वाली है, अव जाता हाथ से खाली है ॥
जो कुनवे का अभिमानी है, अब संग न उसके साथी है ॥
कहो क्या लाया संग तोशा है, तेरा जिसपर इतना भरोसा है ॥
खान पान का संग सामान नहीं, लगी भूख और प्यास सताती है ॥
यदि कितना ही धन जोड़ेगा, उसे अन्त को इक दिन छोड़ेगा ॥
संग धर्म की बिल्टी जायेगी, और वस्तु संग नहीं जाती है ॥
क्यों लम्बा पाँव पसारा है, चन्द मिनट का यहाँ तो गुज़ारा है ॥[६]
क्यों लड़े है साथ मुसाफरों के, तू 'अमींचन्द' बड़ा उत्पाती है ॥

---

१. जीव शव्द का पञ्जावी रूप है। २. काँपता है। ३. छोड़कर। ४. अपना, स्वजन। ५. झाँककर देखना। ६. 'कुछ क्षण का यहाँ गुज़ारा है' ऐसा परिवर्तन बाद में सम्पादकों ने किया। यह परिवर्तन छन्द की दृष्टि से अच्छा है।

(७७)

रागिनी=बढ़हंस, ताल=धमार (पंजाबी गीत)

एथे रहना नहीं है, मत खरमस्तियाँ कर ओ॥
तन मद, धन मद, और राज मद पीकर, मस्ती न कर ओ॥
कौरव पाण्डव, भोज और विक्रम, दस खाँ गये ने किधर ओ॥
रामचन्द्र, लङ्केश विभीषण, लङ्का को गये खाली कर ओ॥
काल वारण्ट निकाल अचानक तुरत ले जांसिया धर ओ॥
साथ न जासी सम्पत तेरे, जब्त हो जासी घर ओ॥
मरघट दे विच मिलसी भूमि, साढ़े तीन हथ भर ओ॥
एह देह खेह हो जासी, पल विच रूप जोबन जासी जर ओ॥
'अमीर' कबीर न बचया कोई, मौत नू देकर ज़र ओ॥

(७८)

रागिनी=देशी, ताल=झप

कैसा यह आश्चर्य ज्ञान है तुम्हारा।
जिस मिटाया है भ्रम संशय सारा॥
इसी ज्ञान के बल से काम आदि जीते।
इसी से जितेन्द्रिय हो, मन वैरी मारा॥
इसी ज्ञान की शक्ति से जाना यथावत्।
विषयभोग को काग विष्ठा विचारा॥
कृतार्थ हुआ करते हैं निश्चयवाले।
जिनको भरोसा तुम्हारा है भारा॥
अनुमान से प्रथम निश्चय हुए हो।
अनुभव हुआ अब हमें ज्ञान द्वारा॥
जीव ईश सम्बन्ध है व्याप्य व्यापक।
जैसे परस्पर आधेय और आधारा॥
प्रेम प्रवाह अथाह ज्ञान-गंगा।
निकलीं 'अमीं' फोड़ पर्वत को धारा॥[1]

---

१. पुराने संस्करणों में 'पर्वत को धारा' छपा मिलता है। यही ठीक है। 'पर्वत की धारा' ठीक नहीं। अमृत की, जल की, दूध की धारा तो हो सकती है। पर्वत की धारा नहीं होती।

(७६)

रागिनी=पहाड़ी, ताल=तीन

जप ईश्वर को, जप ईश्वर को, आलस ने क्यों घेरा। जीवड़े[1] जप ईश्वर को
कहाँ गये चक्रवर्ती राजे, जिनके बजे थे चहुँ दिश बाजे।
काल का सिर पर बादल गाजे, यह जग रैन बसेरा॥
कीती न तैंने कोई भलाई, स्याही गई सफ़ेदी आई।
वृद्ध भया बीती तरुणाई, पल पल होत अवेरा[2]॥
दिन गया सेवा करते पराई, सो सो सारी रात गंवाई।
मूरख तैनू मत न आई, अव तो जाग सवेरा॥
सुनो सुनो मित्रो प्रिय[3] लालो, ईश्वर की तुम आज्ञा पालो।
सत्य विद्या का दीपक जालो, आगे बहुत अंधेरा॥
बाग बागीच बनाए बंगले, शीशे लगाए रंगाए जंगले।
कौन चलेगा इनको संग ले, अन्त को मरघट डेरा॥
करदे दिल थीं दूर जहालत, ओथे नहीं कोई करदा वकालत[4]।
सच्चे साहिब दी सच्ची अदालत, अमलीं होए नवेड़ा[5]॥
सिद्ध सनकादिक[6] दश अवतारी, 'अमीर, बड़े बड़े मायाधारी।
विक्रम भोज चन्द्र[7] सम भारी, कर गये जोगीदा फेरा॥

(८०)

रागिनी=भैरवी

कर उपासना श्रद्धा भक्ति सों, हे तव गाऊँ गीत।
सुतवत् मुझको करो आलिंगन, जैसे पुत्र पिता में रीत॥
दुगनी चुगनी अधिक दिनों दिन, बढ़ती रहे सदा गाढ़ी प्रीत॥
अमींचन्द के प्रभु तुम्हीं हो नायक, तुम्हीं[8] सहायक तुम्हीं हो मीत॥

卐

---

१. 'जीव रे' को पञ्जाबी में 'जीवड़े' के रूप में लिखा है। २. कु-वेला या विलम्ब के अर्थ में है। ३. मूल में 'प्यार' शब्द है। ४. वहाँ कोई वकालत नहीं कर सकता। ५. कर्मों के आधार पर निपटारा होगा। ६. अर्थात् छोटे-बड़े सब मरणधर्मा हैं। ७. 'चन्द्र सम' के स्थान पर मूल में दिया शब्द ठीक से पढ़ा नहीं गया। ८. पुराने संस्करणों के इस पद्य में 'तुम्हीं' के स्थान पर 'तुम ही' छपा मिलता है।

(८१)

रागिनी=भैरवी, ताल=चार

जय उपास्य, जय आराध्य, जय जग्र देवन के देव,
करके कृपादृष्टि हूजिए सहायक ॥
अपनी कृपा का पात्र कीजिए सेवक को,
दीजिए सामर्थ्यपूर्ण सब विधि लायक ॥
धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, दीजिए महान दान,
तुम हो पिता प्रधान, त्रिभुवन नायक ॥
विनय करत अमींचन्द दिनों दिन बढ़े आनन्द,
आर्यगण भक्तन को, तुम सर्वसुखदायक ॥

(८२)

रागिनी=देशी, ताल=तीन

पवन पानी पृथिवी, अग्नि बसे आकाश सारा।
बसे आकाश सारा, तुझमें बसे आकाश सारा ॥
चन्द्र सूर्य और तारागण, लेवत सभी सहारा।
विश्वचक्र सकल घूमत हैं आश्रय लिये तुम्हारा ॥
तेरे आश्रय नदी नद सारे, चले समुद्री धारा[1]।
प्राणियों के प्राण कृपा करके, तुम हो प्राणाधारा ॥
दशो दिशा कालचक्र तुझमें घूमनहारा।
तुम स्वतन्त्र, निरालम्ब, मुक्त निराधारा ॥

(८३)

रागिनी=भैरवी, ताल=तीन

सदा हो खुशी सदा हो मंगल। सदा हो जलसा यह शादयाना[2] ॥
सदा हो स्वस्ति सदा हो शान्ति। सदा हो सुफला यह यज्ञ रचाना ॥
सदा हो कीर्ति सदा हो लक्ष्मी। हे बाल वृद्धो हे नौजवाना ॥
सदा हो तुष्टि सदा हो पुष्टि। सदा हो बल पराक्रम बढ़ाना ॥
सदा ही आपस में हो प्रेम प्रीति। नमस्ते ही कहकर के दो कर मिलाना ॥

---

१. पुराने संस्करण में 'तुझ को आश्रा कर नदी नाला चले समुद्र धारा' छपा है। यह बहुत वोझिल-है। हमने यह पंक्ति वदल दी है। २. प्रसन्नता, हर्षोल्लास।

(८४)

राग=भूपाली कल्याण, ताल=झप

मन मेरा मदमाते हाथी की न्याईं।
बस में कदापि न आवे है पापी॥
निर्मल नदी को करे है गँधीला।
उजले गंगाजले, न न्हावे है पापी॥
अपनी सफाई स्वयं[1] ही विगाड़े।
सिर पर धूलि उड़ावे है पापी॥
पर-द्रव्य[2], पर-हिंसा, पर-नार ऊपर।
लालच की आँखें चलावे है पापी॥
वट आदि वृक्षों की तोड़े है शाखा।
गन्ने में तृप्ति न पावे है पापी॥
बंधन को तोड़े है अंकुश न माने।
पापों के मार्ग में धावे है पापी॥

卐

---

१. मूल में 'आप' शब्द है। २. मूल में 'धन' शब्द है।

देश की दुर्दशा पर देशवासियों को उद्बोधन

उठो नींद से अब सिहर[१] हो गई। उठो रात सारी बसर हो गई॥
उठो कुल सभा मुन्तशिर[२] हो गई। हवा सब इधर की उधर हो गई॥
बगल में नसीबे को भी लेके सोये। अजल[३] को भी तुम आज दम दे के सोये॥
हुई सुबह और जानवर सारे जागे। ज़नो-मर्द[४] हैं घर बघर सारे जागे॥
शरारत के रसिया बशर[५] सारे जागे। उठे वे भी जो रातभर सारी जागे॥
फ़क़त[६] ख़ाब[७] में बेखबर तुम पड़े हो। अजब नींद की नींद में तुम पड़े हो॥
उठो ऐ बुजर्गों की पत खोने वालो। उठो बाप दादा की मत[८] खोनेवालो॥
उठो अपनी अकल और सुरत खोनेवालो। उठो अपनी बाकी की गत खोनेवालो॥
ज़रा ख़ाबे गफ़लत से आँखें तो खोलो। बही आबरू[९] अब तो मुँह अपना धो लो॥
वो चमका है नूरे सिहर[१०] कुल जहाँ में। नई रोशनी फैली है हर मकाँ में॥
शबे गम ने चादर स्याह है उतारी।[११] खुली ग़फलतों[१२] से न आँखें तुम्हारी॥
कमाऊ कमाई पै चलते हुए हैं। मक्खटू पड़े हाथ मलते हुए हैं॥
सब आराइशें[१३] लुट चुकी है तुम्हारी। बहारें हुईं ऐश की तुम पै भारी॥
वह चलने लगी इज्ज़तों की सवारी। बस अब है जनाज़ा निकलने की बारी॥
गज़ब उमर सोने में तुमने गंवा दी। उठो बन गई और कौमों की चाँदी॥
लुटेरों ने लूटा है घर जागो जागो। चला जाता है मालो ज़र जागो जागो[१४]॥
वो बाबा की जाती है ज़र[१५] जागो जागो। वो भाषा गई दर बदर[१६] जागो जागो॥
वो कुनबे की इज्ज़त चली अब तो जागो।[१७] वो दौलतो हशमत[१८] चली अब तो जागो॥
तरक्की का दिन सारा ढलने को आया। तनज्जुल[१९] ने यह दिन है तुमको दिखाया॥
किया तुम पै इदबार ने अपना साया। मगर गफ़लतों[२०] ने न तुमको जगाया॥
ज़रा अपनी करवट बदलकर तो देखो। पड़े ही पड़े आँख मलकर तो देखो॥
ज़माने की रंगत बदलने लगी है। हवा और आलम[२१] में चलने लगी है॥
उठो धूप दुनिया की ढलने लगी है। हर इक कौम गिरकर सँभलने लगी है॥
बड़े बनते जाते हैं छोटे तुम्हारे। नसीबे हैं किस दर्जा खोटे तुम्हारे॥

---

१. प्रातः। २. विसर्जित। ३. मौत। ४. स्त्री-पुरुष। ५. व्यक्ति। ६. केवल। ७. स्वप्न। ८. मति। ९. सम्मान। १०. प्रातः का उजाला, ज्ञान-भानु का उदय हुआ है। ११. काली रात बीत गई है, अन्धेरा गया है। १२. उदासीनता, प्रमाद। १३. साजसज्जा। १४. मूल में 'उठो' है, 'अब तो उठो' के बजाए हमने 'जागो जागो' रक्खा है। १५. स्वर्ण सम्पदा। १६. घर-घर की ठोकरें खा रही है। १७. इन सारी पंक्तियों में अद्भुत निडरता से विदेशियों की लूटखसोट से देश को सावधान किया है। यह कोई साधारण बात नहीं थी। १८. वैभव। १९. पतन। २०. उदासीनता। २१. संसार।

(८६)

रागिनी=भैरवी

माथे पै नहीं टीका तेरे हिन्दूपन का।
नहीं तस्बीह महराब निशाँ तेरे मोमिन का॥
नहीं पत्थर, नहीं धातु नहीं माटी का।
नहीं गुड़ियों का खेल, खिलौना लड़कपन का॥
नहीं भोगों का भूखा, नहीं प्यासा जल का।
नहीं रिश्वत का आशी[1], नहीं लोभी धन का॥
नहीं साकिन मक्के का, नहीं गिरजाघर का।
नहीं काशी का वासी, नहीं वृन्दावन का॥
नहीं हबशी नहीं चीनी, नहीं तू इंगलिस्तानी का।
नहीं रोमी नहीं रूसी नहीं तू जर्मनी का॥
नहीं तुझ में धड़ेदारी, बेइन्साफ़ी ज़रा।
न्यायकारी तू मुन्सफ़, निर्धन धनियन का॥
आँखों के बिन देखे, सुनता कान बिना।
सबका अन्तर्यामी, वाकिफ़ है मन का॥
है वह शक्तिमान् बिना कर कर्त्ता है।
'अमींचन्द' साक्षीभूत सभी जड़ चेतन का॥

卐

१. खानेवाला।

(८७)

(उर्दू गज़ल)

हक[1] ने तुझको ख़ाक से इन्साँ किया।
कितना लुत्फ़ और किस कदर अहसाँ किया॥
तेरी आँखों को बसारत[2] बखश दी।
दिल पै रोशन जलवाए इरफाँ[3] किया॥
तेरे चेहरे को बनाया आफ़ताब[4]।
तेरी सूरत को महेताबाँ[5] किया॥
नाम रखा उसने तेरा आदमी।
आदमियत के तुझे शायाँ[6] किया॥
क्यों न की ऐसे खुदा की बंदगी।
काम यह क्या तूने ऐ नादाँ किया॥
खातिर इस दुनिया की अपने आपको।
इतना क्यों हैरानो सरगरदाँ[7] किया॥
खुद बिगाड़ा तूने अपने आपको।
आप तूने अपना घर वीराँ किया॥
खाया ग़म तूने वहुत ज़र[8] का 'अमीर'।
मालो दौलत का बहुत अरमाँ किया॥

卐

१. ईश्वर। २. ज्योति। ३. आध्यात्मिक ज्ञान-ज्योति। ४. सूर्य। ५. चमकता हुआ चाँद। ६. योग्य बनना। ७. परेशान। ८. धन की चिन्ता ही तुझे सताती, खाती रही।

(८८)

वेद महिमा

वेद विद्याओं की है खान। वेद में है परिपूर्ण ज्ञान॥
वेद से उपजे ज्ञान अनन्त। पृथिवी से सूर्य पर्यन्त॥
पर अपरा विद्या के भेद। भिन्न भिन्न बतलावे वेद॥
जीव ईश्वर प्रकृति के लक्षण। वेद से निर्णय होत विलक्षण॥
तीन काण्ड का सब सिद्धान्त। वेद बताते हैं भली भाँत॥
वेद सनातन धर्म का ग्रन्थ। वेद है मोक्ष द्वार का पंथ॥
वेद से सुख सम्पत हो प्राप्त। प्रतिपादित करते हैं आप्त॥
वेद में गायत्रादि छन्द। शव्द अर्थ सारे सम्वन्ध॥
उसने यह सब किये प्रदान। जिसको कहते शक्तिमान्॥
वेद अविद्या का करे नाश। सब विद्या का करे प्रकाश॥
मन में रखके दृढ़ विश्वास। चार वेद का पढिए भाष॥
वेदों के सुनसुन उपदेश। सबका पूरा हो उद्देश्य॥
पञ्च महायज्ञ आदि कर्म। प्राप्त होगा वैदिक धर्म॥
वेद मिटावे संशय भ्रम। वेद निरूपण करता ब्रह्म॥
वेद का जग में बड़ा प्रताप। सदा उचित है वेद का जाप॥
वेद अर्थ का करो विचार। 'अमींचन्द' प्रतिदिन बारम्वार॥
महिमा वेद अमाप अतोल। वेद पदारथ हैं अनमोल॥

卐

(८९)

राग=बिलावल, ताल=रूपक

बनरा बनरी ब्याहन आया। (टेक)[1]
धन्य भाग्य लाडली वधू के। सुघड़ चतुर वर पाया॥
मूर्त्ति मोहिनी सौम्य सोहिनी। रूप रंग मन भाया॥
अमींचन्द चिरजीवी जोड़ी। विधि ने जोड़ बनाया॥

卐

---

1. हमने पं० श्री चमूपतिजी का पाठ अपनाया है। दो पंक्तियाँ छोड़ दी हैं।

राग=भैरवी

यह उत्सव तुमको सालाना सदा शुभ हो, सदा शुभ हो
महासज्जनों का बुलवाना सदा शुभ हो, सदा शुभ हो॥
हुई आर्य धर्म की रक्षा तुम्हारे सदुपदेशों से।
फिसलकर पाँव जम जाना सदा शुभ हो, सदा शुभ हो॥
हज़ारों को बहका लेते मुसलमां और ईसाई।
उन्हीं को पीछा दिखलाना सदा शुभ हो. सदा शुभ हो॥
छुड़ाया बाल विधवा को जो रोती और सिसकती थी।
बधिक से गऊ का छुड़वाना सदा शुभ हो सदा शुभ हो॥
जो सन्तानों को रोका है, लड़कपन में विवाह करना।
बुद्धि बल आयु वढ़ जाना सदा शुभ हो सदा शुभ हो॥
अनाथों को जो देते हो अनाथालय के चन्दे में।
पढ़ाना, खाना खिलवाना, सदा शुभ हो सदा शुभ हो॥
बनी जो बाल शाला है, यह फल है तुमरे परिश्रम का।
पुनः विद्या का फैलाना, सदा शुभ हो सदा शुभ हो॥
जो मासिक चन्दा देते हैं, शतांश अपनी कमाई का।
उन्हीं का आर्य कहलाना, सदा शुभ हो सदा शुभ हो॥
कटिवद्ध होके डट जाओ, दिखाओ अपने करतव को।
वैदिक कालेज का वनवाना, सदा शुभ हो सदा शुभ हो॥
बहादुर देश देशों में, जिसे आर्यावर्त्त कहते हैं।
यह हिम्मत तुमको मर्दाना, सदा शुभ हो सदा शुभ हो॥
प्रथम हुआ होम मन्त्रों से, हुई फिर धर्म की चर्चा।
पुनः ईश्वर का गुण गाना सदा शुभ हो सदा शुभ हो॥
'अमींचन्द' वृष्टि अमृत की हुई है आज मन्दिर में।
खुशी के फूल वर्षाना सदा शुभ हो सदां शुभ हो॥

(६१)

वर पूजा के अवसर का एक गीत

रागिनी=गाँधारी, ताल=रूपक

देववधू ऐसी बन आई। जिसकी छवि वर्णी नहिं जाई॥
गज गमनी कटि केहरि रमणी। शोभित मुख द्युति न्याई॥
मृगनयनी कोकिल पिकवैनी। दर्पण देख देख मुसकाई॥
अमींचन्द बन सँवर सुहागिन। वधू देवपूजा को आई॥[२]

हमने आचार्य श्री चमूपतिजी वाला पाठ ही रक्खा है। आर्यसमाजोदय से पूर्व विवाहों में गन्दे गीत, घटिया उपहास और वेश्याओं के नाच होते थे। ऐसे आर्यसमाजिक गीतों ने युग वदलने में सहायता की।

(६२)

रागिनी=जोग, ताल=चञ्चल

अन्त समय में हे जगदीश मुझको, तुमरा ही सिमरण और तुमरा ही ध्यान हो॥
लवलीन हो तुझमें चित्तवृत्ति मेरी, जव तक कि श्वासों में प्राण औ' अपान हो॥
योगी के सदृश लगाऊँ समाधि, ओंकार अक्षर का वाच्यार्थ ज्ञान हो॥
न शोक हो न मोह हो न ममता किसी में, न पीड़ा हो तन को न कुछ दुःख भान हो॥
जीवात्मा का निवास हो वहाँ पर, जहाँ तेरे सुखपद का उत्तम स्थान हो॥

卐

(६३)

सत्संग महिमा

नर सत्संग से क्या से क्या हो जाए।
चन्दन के संग अन्य वृक्ष भी चन्दन सम महकाए॥
लकड़ी के सम भारी लोहा पानी में तर जाए॥
दूध के संग में पानी मिलकर दूध के भाव बिकाये॥
पारस को छूते ही लोहा कंचन खरा कहाये॥
तनिक संग ऋषियों का कैसा चमत्कार दिखलाये॥
रत्नाकर पापी था डाकू ऋषि वालमीकि कहलाये॥
दयानन्द के एक शव्द ने दुर्गुण दूर नसाये॥
सद्गुण धारे अमीचन्द ने ऋषि भक्ति पद गाये॥
सत्संग की पावन गंगा में जो नित उठ के नहाये॥
जीवन उसका अमर हो जाये चारों ही फल पाये॥

सन्ध्या का पद्यानुवाद

गायत्री मन्त्र का हिन्दी पद्यानुवाद

सब जग उत्पन्न करनेवाले। भक्तों के दुःख हरनेवाले॥
प्राणपति प्राणों से प्यारे। सारे कष्ट मिटावन हारे॥
संकट मोचन नाम तुम्हारा। गावे सकल जगत यह सारा॥
काम क्रोध को दूर भगावो। लोभ मोह अहंकार मिटाओ॥
राग द्वेष व्यापे न तन में। नम्र भाव सदा रहे मन में॥
हृदय में प्रकाश हो तेरा। स्वांस स्वांस पे जाप हो तेरा॥
सत्य मार्ग चल कर्म कमावें। चार पदार्थ तुझसे पावें॥
गायत्री को सुनें सुनावें। सदा स्वतन्त्र जीवन पावें॥

आचमनमन्त्र—ओ३म् शन्नो देवी.....

जग जननी तू देवी प्यारे। भक्ति उपजे हृदय हमारे॥
जल थल मही थल तू ही व्यापे। हर वस्तु में तू ही जापे।[1]
दे दर्शन मेरी प्यास बुझाओ। सुखदायी अमृत बरसाओ॥
सुख उपजें चहुँ ओर घनेरे। करो कृपा गुण गाऊँ तेरे॥
कल्याणकारी प्रभु सुख के दाता। देकर ज्ञान हरो दुःख त्राता॥
धर्म धन एश्वर्य बढ़ाओ। शुभ कर्म शुभ गुण सिखलाओ॥
महाराज तेरे गुण गाऊँ। करो कृपा चरणों में आऊँ॥

इन्द्रिय-स्पर्श—ओ३म् वाक्-वाक्......

वाणी के तुम स्वामी प्यारे। ज्ञानी गावें नाम तुम्हारे॥
सदा रहे वाणी में शक्ति। वाणी से हो तेरी भक्ति॥
श्वासों से वायु जो आवे। रोगरहित हो सुख उपजावे॥
श्वास श्वास रटें नाम तुम्हारा। अन्त ओ३म् ही नाम सहारा॥
आँखों को वह शक्ति दीजे। रोग रहित प्रभु इनको कीजे॥
कानों से सुनें नाम तुम्हारा। होवे शुद्ध प्रभु हिये हमारा॥
अमृत कुण्ड नाभि को बनाओ। नाम सदा हृदय में जपाओ॥
हृदय में हो ज्योति तेरी। पूर्ण कीजिए आशा मेरी॥
कोमल कण्ठ बनाओ मेरा। करूँ गान मैं हरदम तेरा॥
हाथों से करूँ काम पवित्र। जिससे बने सभी जग मित्र॥
महादेव प्रभु सर्व हितकारी। करो पवित्र प्रभु देह हमारी॥

---

१. यह पञ्जाबी प्रयोग है। इसका अर्थ है—दिखाई देता है।

मार्जनमन्त्र—ओ३म् भूः पुनातु शिरसि.......

तू जगदीश प्राण आधारा। शीश पवित्र करो हमारा॥
दुःखनाशक सुनो विनय हमारी। आँखे करिए पवित्र हमारी॥
वाणी से गुण तेरे गाऊँ। आँखों से दर्शन तव पाऊँ॥
कण्ठ पवित्र सदा हो मेरा। नाम जपूँ प्रभु हरदम तेरा॥
तुम महान प्रभु जग के कर्त्ता। हृदय शुद्ध करो दुःख हर्त्ता॥
जगत् पिता जग मंगलकारी। नाभि रहे पवित्र हमारी॥
पाँवों को ऐसा बल दीजे। सन्मार्ग अपने में लीजे॥
सुखस्वरूप प्रभु घट-घट वासी। सीस पवित्र करो अविनाशी॥
सर्वव्यापक नाम अनन्ता। अङ्ग-अङ्ग करो शुद्ध बेअन्ता॥
निर्मल हो गुण गाऊँ तेरे। सर्व क्लेश हरो अब मेरे॥

प्राणायाममन्त्र—ओ३म् भूः। ओ३म् भुवः.......

आप हैं ऐ ओम् भक्तों को प्रिय निज प्राण से।[१]
मोक्ष सुख मिलता है 'केवल' आप ही के ज्ञान से॥
अपने भक्तों के लिए ऐ ओम् सुखदाता हैं आप।
सबको धारण कर रहे सबके पिता माता हैं आप॥
सब जगत् के ठहरने का आप ही अस्थान हैं।
घट-घट में व्यापक आप हैं और प्राण के भी प्राण हैं॥
सब बड़ों से भी बड़े हैं इस जगत् में आप ही।
हर मनुष्य के पूजने के योग्य बस हैं आप ही॥
आपने ऐ ओम् यह संसार सारा है रचा।
आपकी महिमा का गायन सब जगत् है गा रहा॥
ज्ञान व ज्योति हैं भगवन् रूप सुन्दर आपका।
आप देते दण्ड हो दुष्टों को उनके पाप का॥
आप अविनाशी सदा से एकरस हैं औ अमर।
काल का होता नहीं है आप पर किञ्चित असर॥

---

१. इस मन्त्र का भक्तजी रचित पद्यानुवाद न मिलने से उन्हीं के समकालीन ऋषिदर्शन करनेवाले मुंशी केवलकृष्ण कृत अनुवाद दे दिया है। —जिज्ञासु

अघमर्षण-मन्त्र—ओम् ऋतं च........

जगत पिता सृष्टि के रचिता। जग त्राता प्रभु सब दुःख हर्त्ता॥
सत्यस्वरूप अतिमंगलकारी। महाराज मैं शरण तुम्हारी॥
महाशक्ति से सृष्टि रचाई। प्रकृति की शोभा दिखलाई॥
ज्ञान दिया, गुरु जगत् कहाया। वेदों का प्रकाश फैलाया॥
जीव वृक्ष पृथिवी के अन्दर। सागर नदियाँ रचे समुन्दर॥
जिस समर्थ से किया पसारा। उसी शक्ति से प्रलय सारा॥
ऐसी रचना आप रचाई । महाराज तेरा भेद न पाई॥
जगत को वश में रखनेवाले। परमेश्वर के खेल निराले॥
मेघ समुन्दर सकल बनाकर। सूर्य चान्द और रात रचाकर॥
ऐसा ईश्वर काज रचाया। महाराज कुछ भेद न पाया॥
सूर्य चाँद भू-मण्डल तारे। लोक-लोकान्तर रचे ये सारे॥
पूर्व के कल्पों में जैसे। जगत् रचाया अंव भी वैसे॥
शेष कर्म जीवों के स्वामी। पुनः प्रगटाय अन्तर्यामी॥
कोटि सूर्य चाँद रचाय। ज्योति रहित भी लोक बनाय॥
तेरा प्रभुवर अन्त न पाऊँ। महाराज मैं बलि-बलि जाऊँ॥

मनसा परिक्रमा—ओ३म् प्राची.......

पूर्व दिशा के तुम हो स्वामी। घट-घट वासी अन्तर्यामी॥
राजों के महाराज हे प्यारे। सकल जगत् हैं तेरे सहारे॥
तेरी ज्योति सकल प्रकाशे। सूर्य-लोक में भी आभासे॥
सूर्य की किरणें हैं प्यारी। रक्षा करती सदा हमारी॥
रवि क्लेश व रोग मिटावे। देहों को आरोग्य बनावे॥
किस विधि तेरी महिमा गाऊँ। बारबार मैं सीस नवाऊँ॥
नमस्कार है तुमको प्यारे। परमपिता जगदीश हमारे॥
करे द्वेष हमसे जो कोई। हमारा द्वेष या उससे होई॥
तव न्याय पर सब-कुछ छोड़ें। खोटे कर्मों से मुख मोड़ें॥
परस्पर सारे प्रीति लावें। महाराज नित्य सीस झुकावें॥

ओ३म् दक्षिणा

दक्षिण दिशा में भी तुम व्यापक। तेरी ज्योतिं सकल प्रकाशक॥
दयानिधि जगदीश्वर स्वामी। करुणानिधि हो अन्तर्यामी॥
सूर्य आदि देवों के स्वामी। रक्षा करते सदा हमारी॥
ऋषि मुनियों विद्वानों द्वारा। देते हमको ज्ञान अपारा॥
चार वेद प्रभु तेरी वाणी। जिसको पढ़ें सुनें सब ज्ञानी॥
किस विधि तेरी महिमा गाऊँ। बार बार मैं सीस नवाऊँ॥
नमस्कार है तुमको प्यारे। परमपिता जगदीश हमारे॥
करे द्वेष हमसे जो कोई। हमारा द्वेष या उससे होई॥
तव न्याय पर सब कुछ छोड़ें। खोटे कर्मों से मुख मोड़ें॥
परस्पर सारे प्रीति लावें। महाराज नित्य सीस झुकावें॥

ओ३म् प्रतीची........

पश्चिम में भी राज तुम्हारा। तू राजा अधिराज हमारा॥
पूज्य देव तुम परहितकारी। परमपिता मैं शरण तुम्हारी॥
जीव-जन्तु, जेते विषधारी। इनसे रक्षा करो हमारी॥
ओषधिरूपी वाण तुम्हारे। सकल रोग मिटावन हारे॥
प्राणों की तुम रक्षा करते। अन्न द्वारा सकल दुःख हरते॥
किस विधि तेरी महिमा गाऊँ। बार-बार मैं सीस झुकाऊँ॥
नमस्कार है तुमको प्यारे। परमपिता जगदीश हमारे॥
करे द्वेष हमसे जो कोई। हमारा द्वेष या उससे होई॥
तव न्याय पर सब-कुछ छोड़ें। खोटे कर्मों से मुख मोड़ें॥
परस्पर सारे प्रीति लावें। महाराज नित्य सीस झुकावें॥

ओ३म् उदीची

शान्तमय सुखरूप तुम्हारा। उत्तर में भी राज तुम्हारा॥
हो अजन्मा और अविनाशी। सर्वव्यापक घट-घट के वासी॥
जो विकार इस देह में आवे। ज्वर आदि या रोग सतावे॥
बिजली में गतिरुद्ध सितारे। रोग कीटाणु सारे मारे॥
धन्य-धन्य प्रभु सुख के दाता। परमपिता जगदीश विधाता॥
किस विधि तेरी महिमा गाऊँ। बार-बार मैं सीस झुकाऊँ॥
नमस्कार है तुमको प्यारे। परमपिता जगदीश हमारे॥
करे द्वेष हमसे जो कोई। हमारा द्वेष या उससे होई॥
तव न्याय पर सव कुछ छोड़ें। खोटे कर्मों से मुख मोड़ें॥
परस्पर सारे प्रीति लावें। महाराज नित्य सीस झुकावें॥

ओ३म् ध्रुवा

नीची धरती में भी व्यापक। सर्वोपरि पूरण अध्यापक॥
महाराज अधिराज हमारे। सकल सृष्टि तेरे सहारे॥
अद्भुत रचना देखी तेरी। वर्णन करे न बुद्धि मेरी॥
पत्ते-पत्ते की कतरन न्यारी। कैसी कीनी प्यारी प्यारी॥
भाँति-भाँति के वृक्ष उगाए। मीठे फल औ' पुष्प लगाए॥
वनस्पतियाँ तेरा गुण गावें। सारी शोभा तुझसे पावें॥
किस विधि तेरी महिमा गाऊँ। बार बार मैं सीस नवाऊँ॥
नमस्कार है तुमको प्यारे। परमपिता जगदीश हमारे॥
करे द्वेष हमसे जो कोई। हमारा द्वेष या उससे होई॥
तव न्याय पर सब कुछ छोड़ें। खोटे कर्मों से मुख मोड़ें॥
परस्पर सारे प्रीति लावें। महाराज नित्य सीस झुकावें॥

ओ३म् ऊर्ध्वा

उत्तर में भी राज तुम्हारा। रवि शशि सर्वलोक उजियारा॥
महादेव सतरूप निरञ्जन। जगतपिता हे सब दुःखभञ्जन॥
तुम ही रक्षा करनेवाले। अन्न उपजाते वर्षा द्वारे॥
बिन वर्षा खेती न होवे। बिन वर्षा सारा जग रोवे॥
वर्षा कर तुम अन्न उपजाते। जीवन देकर प्राण बचाते॥
वर्षारूपी 'बाण' तुम्हारे। रक्षा करते हैं रखवारे॥
भूख-प्यास से प्राण बचावे। शक्ति देकर देह चलावे॥
किस विधि तेरी महिमा गाऊँ। बार-बार मैं सीस नवाऊँ॥
नमस्कार है तुमको प्यारे। परमपिता जगदीश हमारे॥
करे द्वेष हमसे जो कोई। हमारा द्वेष या उससे होई॥
तव न्याय पर सब-कुछ छोड़ें। खोटे कर्मों से मुख मोड़ें॥
परस्पर सारे प्रीति लावें। महाराज नित्य सीस झुकावें॥

उपस्थानमन्त्र—ओम् उद्वयं तमसस्परि

अंधकार से परे प्रभु स्वामी। सुख-सागर प्रभु अन्तर्यामी॥
दिव्य गुणों के देनेवाले। प्रलय काल में रहनेवाले॥
परमदेव सुखरूप हे प्यारे। चराचर जग के तुम रखवारे॥
सर्व प्रकाशों के प्रकाशक। तारागण रवि चन्द्र उपासक॥
श्रद्धा से करें तेरी पूजा। तुम बिन सिमरे और न दूजा॥
शुभ मारग चल कर्म कमावें। ज्ञानीजन तव दर्शन पावें॥
हरदम तेरा नाम उचारें। शुभ कर्मों को मन में धारें॥
सकल सामग्री के उत्पादक। ज्ञानी ध्यानी सभी उपासक॥

ओम् उदुत्यं

जनहित वेद प्रभु प्रकटाया। महिमा का कुछ अन्त न पाया॥
श्रद्धा से प्रभु तेरी वाणी। पढ़े सुने जो कोई ज्ञानी॥
जन्म मरण के फन्दे छूटें। सर्वानन्द वही जन लूटें॥
मुझको भी प्रभु ज्ञानी बनाओ। वेदों का अमींसार पिलाओ॥
वेद पढ़ें हम होवें ज्ञानी। जीवन में न होवे हानि॥
महाराज अब कृपा करो। वैदिक ज्ञान हृदय में भरो॥

ओं चित्रं देवनामुदगादनीकं

सर्वव्यापी हे सर्वहितकारी। सर्वजगत है तेरा पुजारी॥
सकल जगत के स्वामी कर्त्ता। पार ब्रह्म प्रभु दुःख के हर्त्ता॥
तेरा तेज जगत में व्यापे। हर वस्तु में तू ही जापे॥
ज्ञानियों में प्रकाश तुम्हारा। सूरज में तेरा उजियारा॥
अद्भुत महिमा नाथ तुम्हारी। हमसे वरणी जाय न सारी॥
बिन पाँव के चलनेवाले। बिन कानों ही सुननेवाले॥
विन हाथों सब जगत् रचाया। तेरा किस ने अन्त है पाया॥
बिनु चक्षु देखो जग सारा। जन जन का तू पालन हारा॥
हृदय शुद्ध करो अव मेरा। नाम जपूँ हृदय में तेरा॥
महाराज अब दर्शन दीजो। पाप ताप संकट हर लीजो॥

ओं तच्चक्षुर्देवहतिं

परमपिता जगदीश्वर प्यारे। नित्य अनादि व्यापक सारे॥
ज्ञानी जनों के हृदय अन्दर। बना प्रभु तेरा मन मन्दिर॥
आँखों को दो ऐसी शक्ति। सौ वर्ष देखें तव सृष्टि॥
करो अनुग्रह प्रीतम प्यारे। सौ वर्ष रहें तेरे सहारे॥
सौ वर्षों तक अन्तर्यामी। सुनें कान से तेरी वाणी॥
इससे बड़ी जो आयु पावें। तव चरणों में शीश झुकावें॥
बोलें देखें सुनें सुनावें। स्वाधीन हम जीवन पावें॥
महाराज चित चरणीं लावें। प्रतिपल तेरा नाम ध्यावें॥

गायत्री मन्त्र का अनुवाद दिया जा चुका है ।

---

(१) यह पंजाबी प्रयोग है। इसका अर्थ है दिखाई देना, प्रकट होना।

ओं नमः शम्भवाय च

नमस्कार कल्याण स्वरूपम्। नमस्कार मंङ्गलमयं रूपम्॥
नमस्कार मंगल के दाता। नमस्कार सुखरूप विधाता॥
नमस्कार कल्याण के कर्त्ता। नमस्कार प्रभु संकट हर्त्ता॥
नमो नमो शंकर सुखराशि। नमस्कार विज्ञान प्रकाशी॥
नमस्कार आनन्द भण्डारी। हो नमस्ते कविराज हमारी॥

[विशेष टिप्पणीः हमने यथासम्भव भक्त अमींचन्दजी के पद्यानुवाद के साथ छेड़-छाड़ नहीं की परन्तु जो प्रति हमें मिली उसमें कुछ शब्द छूटे हुए थे और कहीं कुछ अस्पष्ट भी थे। ऐसे कुछ एक स्थलों पर अदल बदल करनी ही पड़ी। भक्तजी के इस पद्यानुवाद के पश्चात् मुंशी केवलकृष्णजी ने भी सन्ध्या को कविता का रूप दिया। पंजाब में श्री धर्मवीरजी के पंजाबी पद्यानुवाद तथा महाकवि शान्त के हिन्दी पद्यानुवाद पर भक्तजी के अनुवाद की स्पष्ट छाप दिखाई देती है। —जिज्ञासु]

भजन—13

खेडन दे दिन चार नीं मायें खेडन दे दिन चार नीं
मुड़ नई आना देस वगाने, खेडन दे दिन चार नीं
खेडदी खडन्दड़ि नूं शामां जे पैयां
विसर गया घर वार नीं माये, खेडन दे दिन चार
खेडदी खडन्दड़ि ने जन्म गंवायां, रोनी आं जारो जार नीं
खेडन दे दिन चार नीं

भट्ठ पइयां पूनियां, भट्ठ पये गोड़े
जद वनया नां मेरा दाज नीं मायें
खेडन दे दिन चार नीं
खेड दी खडन्दड़ि नूं कंडा पइयां
हो गई हाल देहाल नीं खेडन दे दिन चार नीं
खेड दी खडन्दड़ि ने उमर गंवाई
ते भूल गया करतार नी मायें
खेडन दे दिन चार नीं
अमीचन्द बामण लैन नूं आया
रोन लगा मेरा मां पियू जाया
पै गई हूक पुकार नीं मायें
खेडन दे दिन चार नीं

"मेहता अमीचन्द जी"

प्रा० राजेन्द्र 'जिज्ञासु'